

प्रतीक

लेखकक ग्रन्थ कृति

- | | |
|----------------------------------|--------------------------|
| (१) कुमार | उपन्यास |
| (२) संन्यासी | काव्य |
| (३) विडम्बना | ग्रन्थ संग्रह |
| (४) श्री मद्भागवद् गीता | मैथिली-पद्यानुवाद |
| (५) क्वाइयात ए ओमर सैयाम | मैथिली-पद्यानुवाद |
| (६) बाभनक बेटी | बङ्गलाक अनुवाद (उपन्यास) |
| (७) दू पत्र | लघु उपन्यास |
| (साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत) | |
| (८) पतन | काव्य |
| (९) विप्रदास | बङ्गलाक अनुवाद, प्रेममे |

श्री उपेन्द्रनाथ झा 'व्यास'

प्रतीक

कवि

श्री ३००० प्रतीक वि

१००० वि

१-१०००, १००० वि

१००० वि

१००० वि

१००० वि

१००० वि

१००० वि

श्री उपेन्द्रनाथ झा 'व्यास'

१००० वि

१००० वि

कठिन

प्रकाशक —

श्री ब्रजेश्वर कुमार झा

श्री भवन

बोरिङ रोड, पटना—१

प्रथम संस्करण

सर्वाधिकार लेखकाधीन सुरक्षित ।

मुद्रक—

नोवेल्टी कलर प्रिन्टिंग वर्क्स,

नयाटोला, पटना—४

मूल्य—

15/-

मिथिला, मैथिल, मैथिलीक

अनन्य उच्चायक

स्वनाम धन्य स्व० ललित बाबूक

पुण्य-स्मृतिमे

सादर समर्पित

कविश्रीमद्, कविश्रीमद्, कविश्रीमद्

कविश्रीमद्, कविश्रीमद्

कविश्रीमद्, कविश्रीमद्, कविश्रीमद्

कविश्रीमद्, कविश्रीमद्

कविश्रीमद्, कविश्रीमद्

सूची

	पृष्ठ
१ सूर्य	१
२ निर्झर-नीर	२
३ बनफूल	३
४ शिशिर मेघ	४
५ विद्यापतिक मृत्यु	५
६ हरिद्वार (१)	१५
७ हरिद्वार (२)	१६
८ वसन्त	१७
९ जय भारत	१८
१० चारदा-विजय	२३
११ मानभूमि	३५
१२ कातिक धबल तिथि त्रयोदशि	४०
१३ जरतार उपाख्यान	४१
१४ सौन्दर्य बोध	५२
१५ प्रतीक	५५
१६ रिक्तः सर्वोभवति हि लघुः	५८
१७ लागल अछि कुहेस	६३

(ब)

१८ मेहक बड़द जेकाँ	६६
१९ हत्या	७१
२० अभिनन्दन	७६
२१ आउ दुर्गे	७८
२२ अन्तरिक्ष यात्री	८०
२३ बाह रे संसार, देखले संसार	८३
२४ विद्यापति	८६
२५ सान्ध्य-प्रभात-तारा	९१
२६ जेठक दुपहरिआमे	९२
२७ कौआ	९७
२८ मृदु-मयंक हंस विशु	(१) भाग १०३
२९ ओ गाछ	(२) भाग १०४
	भाग २
	भाग ३
	भाग ४
	भाग ५
	भाग ६
	भाग ७
	भाग ८
	भाग ९
	भाग १०
	भाग ११
	भाग १२
	भाग १३
	भाग १४
	भाग १५
	भाग १६
	भाग १७
	भाग १८
	भाग १९
	भाग २०

दू शब्द

तेरहे चौदह वर्षक अवस्थामे मिडिल स्कूलक एक पंडित जी हमरा 'ब्यास' कहए लगलाह । एहि आशीर्वादी उपनाम वा मा सरस्वतीक कृपासँ दू, तीन वर्षक बाद हम किछु किछु कविता बनबए लगलहुँ ।

१९३६ ई० मे जखन पटना अएलहुँ त सम्पर्क भेल श्रद्धेय श्री हरिमोहन बाबू एवं श्रद्धेय श्री सुभद्र बाबूसँ; कमहि मैथिलीक पठन एवं लेखन दिशि रुचि जागल । १९३८ मे दड़िभंगासँ स्व० रमानाथ बाबू द्वारा सम्पादित त्रैमासिक 'साहित्य पत्र' मे धारावाही रूपे प्रकाशित श्रीयुत तन्त्रनाथ बाबूक 'कीचक वध' क छन्द विशेष आकृष्ट कएलक । ओही वर्ष दुर्गा पूजाक अवसर पर मिथिला मिहिर मे प्रकाशित हुनक एक 'सॉनेट' (चतुर्दश-पदी) सेहो बढिजा लागल छल । ओहि छन्द क अनुकरण कए हम पहिल 'सॉनेट' 'सूर्य' १९३८ ईक मेघ संक्रान्ति दिन लिखल । कमहि 'बलेक भस' छन्द सेहो अपनाओल (विद्यापतिक मृत्यु ओही छन्द मे अछि) प्रस्तुत पुस्तकमे पहिल कविता ओएह चतुर्दश-पदी 'सूर्य' थीक ।

ओही समयसँ यथा रुचि, यथा समय, कविता एवं आमो-वस्तु लिखैत रहलहुँ अछि, 'नितान्त' स्वान्तः सुखाय । विज्ञान एवं अभियंत्रणाक छात्र छलहुँ; पाछाँ अभियंत्रण-सेवामे लागल रहलासँ बहुत नहि लिखल भेल अछि । ई 'मुक्तक' कविता सभ किछु त पहिलुक मिथिला मिहिरमे प्रकाशित भेल छल, एम्हर आबि '६५क बादक अधिकांश कविता आकाश-वाणी सँ सेहो समय-समय पर प्रसारित भेल अछि । मित्र वर्गक

(ब)

विचार भेलन्हि आ' (गत वर्षक बाढिक बाद, जखन ई सभ कहना बाँचि गेल) अपनो विचार भेल जे एकरा सभकेँ एक पुस्तकमे प्रकाशित कए दी ।

सैंतीस-अठतीस वर्षक दीर्घ अवधिमे रचित सभटा त नहि किन्तु बहुत किछ मुक्तक कविता एहिमे संकिलित भेल अछि । विज्ञानक छात्र रहलासँ कवितामे यत्र तत्र ओकर प्रभाव पड़ब अनर्गल प्रायः नहि बूझल जाएत-यथा-संभव नूतनता, वैचित्र्य, बैविध्य एवं चमत्कारिता लएबाक चेष्टा त कवि लोकनिक रहिते छन्हि; ओ कहाँ तक सफल भेलाह, सुधी-जन बुझैत छथिन्ह ।

[परिशिष्टमे कविता सभहिक विषयमे रचनाक समयस्थान एवं आवश्यकतानुसार छोट टिप्पणी सेहो देल गेल अछि ।]

'स्वान्तः सुखाय' क सङ्ग हमर जीवनक अभिलाषा रहल अछि मातृभाषा मैथिलीक किछु सेवा करबतै कविता वा अन्य लेखन कर्ममे लागल रहैत छी । ई ग्रन्थ छपएबाक काल ध्यानमे छलाह मिथिला, मैथिल, मैथिलीक अनन्य सेवक एवं उन्नायक स्वनाम धन्य स्व० ललित बाबू 'ओ गाछ' शीर्षक कविता हुनके आकस्मिक निधनक बाद लिखल गेल छल । ई पुस्तक हुनके पुण्य-स्मृतिमे समर्पित अछि ।

स्वतन्त्रता दिवस

१५-८-१९७६

श्रीउपेन्द्रनाथ झा

सूर्य

जनिका बलपर धरिणी लए सभ भार
सीमित पथ अनुसरणशील, लए संग
मंगल बुध ग्रहगण, लाबथि बहुरंग
प्रातः, सन्ध्या, मधु-ऋतु, वर्षा, जाड़,
जाहि ज्वलित अंगारक घए आधार
अम्बर विच जनि नटी नर्तकक संग
सूर-वद्ध भए नाचए भरल उमङ्ग,
धूमथि तीव्र वेगसँ चक्राकार ।

जाहि तेज-पुञ्जक अबइछ किछु अंश
शक्ति भरल ज्योतिक तरङ्ग एहि प्रान्त
जीवन रूप, तथा जाइछ अश्रान्त
शेष कतए—अज्ञात ! विश्वसर-हंस !
आदि-शक्ति-भाजन, शुभ दीप्त ललाम
ज्योतिष्पदमे स्वीकृत करिअ प्रणाम ।

निर्झर-नीर

जनमि तुङ्ग गिरि रत्नक गेह महान,
सूतल परम पुनीत जननि-सुख-शान्ति
भरल कोरमे, भेल अचानक क्रान्ति
नवल हृदय विक, जागल सहसा प्राण
आर्त्तनाद सुनि, धए कर्त्तव्यक ध्यान
चलल, न आएल भारत-भारत क्लान्ति
मोह-जन्य सम्बन्ध-बन्धनक, शान्ति
पाओल थोड़ तोड़ि सभ पथ पाषाण ।

सम्मुख युवती नव विटपी अति थीर,
रङ्ग विरङ्गक कुसुमक भूषण-पूर,
वंक दृष्टि, गबइत पिक पंचम सूर,
किन्तु धन्य, पद भूमि चलल ई बीर !
सहि दुख अति जग शान्त कएल सुचरित्र,
अन्त अनन्तक पथ पर परम पवित्र ।

वनफूल

प्रकृति कला केरि तुच्छ अंश वनफूल—
नीरव वनमे पड़ल रहिअ एकान्त
क्रीड़ा करइत बाल्यकालसँ शान्त
शीतल सुखद समीर संग, सभ शूल
अंग-लग्न जे वृक्षल विधि प्रतिकूल
विसरि जाइ' छी, अबइत अछि एहि प्रान्त
गुनगुन करइत भ्रमर जखन अश्रान्त,
कहइछ प्रिय सन्देश, मधुर सुख-मूल ।

बाल-युवति-कवरी-शृङ्गारक मान
अछि नहि, सुर-शिर-भूषण हित आयास;
किन्तु एक अछि जीवन भरिक प्रयास—
करइत सतत जगत हित सौरभ दान,
अन्त समय निज मातृ-चरण-रज-लीन
त्वामि दैत छी जीवन सुरभि विहीन !

शिशिर-मेघ

आतप-आकुल-तृपित धरा अति क्लान्त;
 क्रूर निदाघक नग्न नृत्य, तेहि काल
 जीवन-रस दए कएल जगतकेँ शान्त
 मेघ, पसारल नयन रम्य धन-जाल ।
 शत सहस्र जिह्वासँ कए रस पान
 वास्य-पूर्ण-अंजल-युत धरा समस्त
 पुलकित, गाओल चन्द्र-रश्मि सङ गान ।
 किन्तु आज ? मानव-कर-शोषित त्रस्त
 वसुधा नग्न पड़लि नीरस असहाय ।
 मेघ ! उचित तुअ गर्जन, झंझावात,
 शीतल-उपल-वृष्टि अरु अशनि-निपात
 शिशिर-शीत-कम्पित मानव पर ! हाय !
 किन्तु उदर पूर्त्तिक आगू अपमान,
 कष्ट, यन्त्रणा ? किछु नहि हे भगवान !

विद्यापतिक मृत्यु

शरद समय मन भावन परम पवित्र,
 चारु चन्द्रिका घवल रजनि निश्शब्द
 नील गगन विच इन्दु सहित नक्षत्र
 सीमित पथपर चलइत परम प्रसन्न
 देखथि अपन शान्तिमय जग उपकार ।
 जगपालक श्री विष्णु उठल छथि आइ;
 आवाहन कमलाक कएल एहि सानि
 घर घर कुल रमणी आलीपन लीखि,
 पल्लव युत शुभ कलश राखि गृह द्वार ।
 शोभित अछि धन राजि शालि सम्पन्न १०
 सकल गृहस्थ समाजक सुखमय आश ।
 जगती-तलपर सकल जीव आनन्द,
 मन्द मन्द वह शीतल सुखद समीर
 कए सौरभ सेफालिक जग-मन मोह ।

(६)

सूनल कविपति विद्यापति एहि काल
देखल स्वप्न राज्य विच योगी एक
कर त्रिशूल, भस्मावृत सकल शरीर,
बद्ध-दृष्टिसँ देखि, क्षणक उपरान्त
अपना निकट बजाए कहल—अहँ शीघ्र
जगत-मोह तजि तीर्याटनक निमित्त २०
चलु कवि हमरा सङ्ग श्रेय-पथ-लीन ।
निद्रा भंग भेल, कवि कएल विचार
अन्त समय अछि शीघ्र हमर, त्रिपुरारि
आएल छथि ई सूचित करक निमित्त !

जे शिव निज सेवकसँ भए अति तुष्ट,
सेवा-वृत्ति ग्रहण कए, सहि कत कष्ट
रूप्याति कएल मम जग भरि, की नाहि आव
रक्षता' अपन शरणमे चरण समीप ?
धन्य भक्त-वत्सल शिव !

अतिशय शीघ्र
करिअ कृपा सेवक पर । ई तन तुच्छ ३०
त्यागक हेतु मनोरथ कएल अनेक,
जहिआसँ प्रभु अहँ छोड़ल मम सङ्ग ।

(७)

किन्तु अपन की साध्य, यथा आदेश
होइछ ईश ! तथा चलइछ संसार ।
जन्म बिताओल देव ! अहँक गुण गावि
यथा योग्य वाणी अनुकम्पा पावि,
प्रेमक बीअ बपन कएलहुँ एहिकाल ।
रचि-रचि गीत अनेक जकर फल मुक्ति,
होएत निश्चय ज्ञान विवेकक सङ्ग ।
किन्तु अल्प-मति समुदायक यदि हानि ४०
होएत ईश ! कविक की एहिमे दोष ?
जकर हृदयसँ बहराइछ अनजान
कविता, सरिता निस्सृत हो गिरि छोड़ि
दोष रहित, पुचि जाए अनेको प्रान्त
जीवन रूप, किन्तु थल कुतिसत पावि,
जन-जीवन नाशक कारण जनु होअ !
एहि विधि सोचथि मत्त मन करथि प्रणाम,
आत्मविभोराभुधिमे कखनहुँ मग्न,
कएल व्यतीत कतहु खन, जखन सुरम्य
प्राची कुंकुम-राग-रंजिता भेलि ५०

(८)

मलय पवन अति शीतल करसँ स्पर्श,
कएल सुभ्र शेफालिक कोमल अंग—
खसल जाए धरिणीक अंक सुकुमारि ।
कएल विहग कलरव, अरु अलिकुल वृन्द
आकुल भए निज प्रेयसि सन्निधि जाए
कएल करुण क्रन्दन-सम्प्रति अति ह्रास,
क्षीणकमलिनी-वदन अश्रु-युत देखि ।
पौछल करसँ अश्रु-बिन्दु ओहि काल
भानु; प्रफुल्लित सरोजनीक समस्त
मुख मंडल भए गेल—यथा अति क्षीण, ६०
मृत शय्या पर पड़लि परम सुकुमारि
पाबि विदेश समागत पति-कर-स्पर्श,
होइछ परम प्रसन्न सहित मृदु-हास ।
आएल कत जन प्रातहि कविक सनीप;
कहलन्हि शान्त-चित्त, सभकेँ बैसाए—
(अपन पुत्र हरिपति छलथिन्ह तत ठाढ़)
“करिअ हमर अन्तिम कालक ओरिआओन”
जाएव हम जननी सुर-सरिता-तीर”

(९)

सभ किछु कए समतूल चलक अछि शीघ्र”
ई सुनतहि सभ लोकक लोचन देखि ७०
अश्रु-पूर्ण, बजलाह—“त कानक काज
संसारक त’अछि नियमे एहि रीति !
“हमरा सन अछि भाग्य ककर जग भेल ?
पूर्ण आयु, नहि रोगक कोनो अंश,
भोग कएल अति, मिथिलाधिप सन मित्र !
“सभ लोकक एहि लोक बीच अछि कर्म,
कर्म-वीर भए जीवन सफल बनाए,
अन्तिम समय मिलए ओहि शक्ति अनन्त ।
हम शिव शंकर कृपा पाबि सभ सौख्य
पाओल सभ विधि । की नहि श्वेत-सुकेतु ८०
हमर यशक एहि देश विच फहराए !
“दुःख एक द्वियमे रहि गेल विशेष
नहि मम तनय, न आन केओ हो भान
सम्प्रति जे परिबोधत मिथिला माए
पोछत हुनकर नोर हमर उपरान्त ।
“अछि नहि मालाकर एतए एहिकाल

जे राखत उद्यान मैथिलिक रम्य
साहित्यक रस सीँचि-सीँचि, नव पद्य
गद्य-गीति-समनक कोमल कमनीय
माला रचि पहिराओत, पूजत देवि ६०
भारत-भारतीक पद कमल ललाम ।
किन्तु अपन की साध्य ! भविष्यक डोर
छथि धएने ओ सर्वश्रेष्ठ भगवान,
जनिकर इज्जतिसँ चलइछ संसार ।
"जाउ अहाँ सभ, नहि विलम्बकेरि काज
गङ्गा-तट चलबा' ले' होउ सयत्न" ।
आगाँ आगाँ कविक पालकी श्वेत,
पाछाँ विसपी ग्रामक जन समुदाय—
की बालक, की वृद्ध, नारि सभ लोक
शोकाकुल भए चलल, अश्रुयुक्त नेत्र । १००
मृग-शावक जे छल कविपति-उद्यान,
चलल दोड़ि कत पोषित कीर कपोत
पालकीक ऊपर उड़ि चलइछ सङ्ग ।
कमल, बहइछ नर-नारी क समाज ।

जे सूनथि ई वात, आँखि भरि नोर—
चलथि पाछु ऋषि-तुल्य कविक सङ्ग आज;
जे अक्षम, से कनइत करथि प्रणाम
पावि सान्त्वना रहि न सकथि ओ धीर ।
चलइत, बहइछ जनधाराक प्रवाह—
किन्तु प्रसन्न-चित्त अरु सस्मित-आस्थ,
कविपति केरि अछि आज; यदपि दुइ नेत्र ११०
स्मिपित तथापि जहनु-तनयाके देखि,
हृदय बीच, ओ कत केरि करथि प्रणाम ।
चलइत चलइत राति अधिक भए गेल—
देखि सुभहिके श्रान्त, तखन कविश्रेष्ठ,
पुछल—'अछि जननीक कोर कत दूर ?'
एक कोस वा डेढ़ कोस—ई सून,
पतित-पाविनी दिशि कर जोड़ि, तुरन्त
स्थगित कएल यात्रा ओ दए आदेश—
की यदि जननि-शरण जएवाक निमित्त, १२०
पुत्र आवि कए रहि जाएत किछु दूर
कलान्ति श्रान्ति-वश, आतुर-शिशुक पुकार

(१२)

पहुँचत की नहि ओतए, अन्ध केरि दृष्टि
पड़त न सन्तानक ऊपर, की आबि
रक्षा नहि करतीह तनय दुख देखि ?
सूतल सभ जन, किन्तु न कवि-पति नेत्र
भेल निमीलित पल भरि । सुरसरि धार
क्रमशः सन्निधि अबइत देखि प्रसन्न,
परम पूत जल कल-कल छल-छल शब्द
सूनि समीपहि, दृष्टि पड़ल विच धार— १३०
धवल चन्द्रिका घोट एक अति दिव्य,
शुभ्र-वसन-तन स्फटिक समुज्ज्वल देवि
जलसँ ऊपर ऊठि, देखि किछु काल
पुनि भेलीह जलमग्न । हर्ष सँ भेल
पुलकित सकल शरीर, संकृता भेल
हृत्तनी, जैसे निराल रुति संगीत
कवि-मुखसँ, जे लए तरङ्ग-युत वायु
जाए मिलल जल कलकलसँ ओहिकाल ।

× × ×
प्रत्यक्षहि ऊठल सभ जन, पुनि देखि

(१३)

अति समीप जाहूँवी धार अति क्षुब्ध, १४०
शीघ्र जाए मार्जन कए कवि लग आवि,
आश्चर्यान्वित कहए परस्पर लोक—
महाकविक महिमा अरु करुणापूर्ण
जगत-पाविनी गङ्गा-गुण-गण-गान ।
प्रातःस्नान कएल सभ; कविपति जाए
पुत्री निकट कहल—“दुल्लहि तोर माए,
छथुन्ह कतए ? ओ आवथु एखन नहाए !....”
तखन....सभहिंकेँ दए अन्तिम सन्देश,
जल विच जाए कएल मज्जन, अतिहृष्ट ।
पूजा कएल जलहि विच विष्णु महेश, १५०
गावि सुनाओल निज दुइ गीत पुनीत;
कएल प्रार्थना मौन ‘शीघ्र हे देव !
राखिअ दास बनाए चरण लग आव ।’
पुनि दए दूब जहाँ अएला कवि तीर,
उज्ज्वल सिकता ऊपर हुनक शरीर
खसल ततए निश्चेष्ट । सकल परिवार,
आबि पिआओल गंगाजल । अविलम्ब,

खूजल आँखि, बढाओल कविचर हाथ
जननी-जल दिशि, भेल जखन संस्पर्श,
हास्य-चिह्न-युत-वदन हुनक ओहिकाल १६०
भेल प्रसन्न, यथा शिशु माएक कोर
सूतल, उठइछ पियतहि जननी-दुग्ध,
अस निज कोमल करसँ अम्बक अङ्ग
परसि, परम आनन्दित हो मृदु-हास
पूर्ण-अधर-युत मुख, जे करइछ मन्द
बाल-इन्दु-मंडल सह-क्षीण-प्रकाश ।
वैतरिणी आदिक सभ विधि सम्पन्न
भेला पर, सभ लोकक दिशि कवि हेरि,
दृष्टि उठाओल जल ऊपर एक वेरि
सून्य गगन मे; नेत्र निमीलित भेल— १७०
हाथ उठाओल ऊपर, ऊठल अंग,
ऊर्ध्वगमन कएलन्हि कवि तजि संसार ।
क्षीण तरणि कर, वायु क्षीण गति भेल,
गङ्गाजल कल कल करइत चल गेल । १७४

हरिद्वार

१

देखल हम जहिआ हरिद्वार !
औ परम-पूत रमणीक भूमि
सुरलोक - गमन - पथ - प्रथम - द्वार ,
जत' होइछ कल-कल नाद सहित
निस्सृत गिरिसँ सुरसरिक धार ।
किछु श्याम हरित तृण लता राजि-
रोमावलि-युत अछि गिरि अशेष
अति श्याम वर्ण, विकराल काय ,
के कहत हृदय हिनकर विशेष—
उज्ज्वल तुषारमय, अति पवित्र ,
जे द्रवीभूत भए करए शान्त
सलिला - जलसँ निज चरण प्रान्त-
रक्षित देशक ज्वाला नितान्त !
सभ पाप मुक्त ओहिकाल भेल,
उपजल मनमे अति शुचि विचार ।
नतमस्तक कएलहुँ नमस्कार ।
देखल हम जहिआ हरिद्वार !
देखल हम जहिआ हरिद्वार !!

(१६)

२

ओ परमरम्य मञ्जुल प्रभात !
 पर्वत - प्रदेश - वन - कुसुम - कुञ्ज,
 सुरभित पवित्र मृदु मन्द वात,
 गङ्गांचल - चञ्चल - ऊर्मि - स्निग्ध,
 शीतल करइछ सभ जनक गात ।
 अति शुभ्र उच्च गिरि-शिखिरासन पर
 बैसि परम आनन्द मन्त,
 स्वर्णिम परिधान पहिरि प्राची—
 नव-जात तरणि सुत अङ्कलग्न
 देखि गौरवयुत; मातृ-हृदय
 होएत किएक नहि साभिमान,
 अछि जकर प्रदीप्त तनए करइछ
 संतत जग - जीवन ज्योतिदान !
 अतिशीघ्र ध्यान आकर्षित हो'
 सुनि आरतीक घंटा निनाद
 मन नाचए लए मंगल प्रसाद !
 मन नाचए लए मंगल प्रसाद !!

(१७)

वसन्त

भेल फागुन अन्त, देखु, वसन्त आएल ।
 यामिनिक अन्तिम प्रहर प्राचीक भाल विराज
 बुक ज्योतिष्मान, कोकिल करए पंचम गान
 मुकुलित आम्र-शाखा बैसि ।
 पवन पंकज अह रसालक मंजरीक सुगन्ध
 लए वहए अति मन्द, भत भन भमए भमरा मत्त ।
 प्रकति शोभा - नवल किमलय, हरित पत्र निचित्र,
 रक्त किशुक, स्वेत जूही, अमलतास सुधीत
 करए मन मोहित, करए आकृष्ट सभहिक चित्त ।
 किन्तु, प्रकृतिक ई मनोहर सौम्य प्रातःकाल १०
 छनहि बदलए—
 जखन-रवि कर-निकर बह्लि समान
 तप्त करइछ भूमि, अह उद्दण्ड पश्चिम वायु
 वहए दिन भरि भए सहायक अग्नि देवक, खिल
 कृषक देखए गृह अपन भवभावशेष सभस्त
 अन्न संचित क्षार परिणत, वायुवेगंक संग

शून्य गगन विलीन,
 अरु निज अल्प वयसक पुत्र
 मातृ-कोड़-स्थित बुभुक्षाकुलित तरु तल सुत ।
 कृप सभ जलहीन, वापी शुष्क, तटिनी बीच २०
 तप्त सिकता राशि, अरु तृण-रहित क्षेत्र विशाल,
 कमला नदी तट ठाढ़ अछि आमक भयद कङ्काल ।
 ई वसन्तक शुभ समय ?
 मानव जगत कोन भाति
 कए सकत उपभोग
 अतिशय दग्ध हियसँ राति
 नील नभ तारक खचित, अति शान्त प्रकृतिक रूप ?
 की पिपासित क्षुधित बालक भए सकत संतुष्ट
 शुभ्र-नभ-गंगाक करुणा दृष्टसँ ? अति क्षुब्ध
 व्यथित युवकक हृदय विच होएत मृदल झंकार ३०
 पिकक कुलरव सुनि समीपहि ? की पपीहा बोल
 युवति-मन अस्थिर करत अभिसार हतु ? निचिन्त
 सुति सकत की वृद्ध नीरव शीत रजनिक अङ्कु ?

जय भारत

आइ ई शुभ विजय दिन,
 तारीख पन्द्रह, शुक्र,
 आओर एहि देशक नवल इतिहासमे विख्यात मास अगस्त,
 भए रहल अछि दृढ़ ब्रिटिश-साम्राज्य गौरव अस्त ।
 छलहुँ हम सभ ग्रस्त,
 आओर जे किछु देस छथि परतन्त्र,
 रटि रहल स्वाधीनता केर मंत्र,
 सभक मनमे भरल छन्हि उल्लास,
 आब हुनका होइत छन्हि विश्वास—
 छथि देखैत भविष्यकेँ ओ पूर्ण आशा दृष्टि, १०
 भए रहल अछि आइ अभिनव सृष्टि ।
 दामता केर पापसँ रंजित विकृत इतिहास-गत ओ पत्र—
 उनटि रहल' आछ, एखन प्रारम्भ
 भए रहल अछि मुक्ति-नव-अध्याय,
 आइ होइछ मुक्त चालिस कोटि जन-समुदाय ।
 आइ अछि स्वाधीन ।
 आह ! ओ परतन्त्रता !

(२०)

दू शताब्दी पूर्व तोहर कठिन चाडुरमे फँसल ई देश,
ई हमर प्रिय देश भारतवर्ष,
छल जगत-विख्यात, की ऐश्वर्य, की सत्कषं ! २०

किन्तु जहिआसँ कसल जंजीर,
कमहिँ पतनोन्मुख भेलहु हम—
कला बौशल वृत्ति ओ व्यापार
नष्ट बौद्धिक, सांस्कृतिक आधार;
विविध नैतिक, राजनीति हार,
प्रकृति-धारा रुद्ध, मृत उच्छ्वास ।
अन्त तक बस बचल अति कृश मात्र
अस्थि पजर मात्र ।

किन्तु एह कुलेवरमे अमर छल ओ अंश
आत्म-जागृति, पूर्वजक स्मृति
देत छल बल, प्रेरणा सभ भाँति
सुप्त अवयवमे सतत छल चेतना-कण
ज्वलित — जीवित क्रान्ति,
भ्रूलोके तोड़ि फेकवा ले' सदैव अशान्ति ।
छलहु अक्षरेत एकरा शिथिल होइत गेल ई दुबंग,

(२१)

सहल हम कत क्रूर अत्याचार,
पाशविक अरु नीचतम व्यवहार,
बाल, अबला, वृद्ध-युवा सभहिक कहब की ?
सड़ल कारागारमे—बलिदान शत शत प्राण
बढ़एवा ले' भू-जननि-अभिमान, ४०

विश्व-भूषण अनेको वर रत्न
यत्नसँ पोषित, सुरक्षित, कएल हम उत्सर्ग—
देशके स्वाधीन करबे टा हमर छल सर्ग ।

अहिंसा अरु शान्ति-पथ पर
बिना कोनो तोप वा तरवारि अथवा यंत्र
आत्म-बल अरु एकताक सुमंत्र
कए बढ़ल चललहुँ, अनेक प्रहार
शत्रु करइत छल, सहिअ हम, भुकाओल नहि माथ,
आओर अपने नहि उठाओल हाथ;
शत्रुओस छल त हमरा द्वेष,
ई अहिंसा-युद्ध—शांतीजीक तब संदेश । ४०

एहि अमोघ प्रयास अति प्रबल अरि पर जीत
बेल अछि हमरा, बनाओल शत्रुके हम नीत !

(२२)

विकल युगमे - जखन सब थल भए रहल संवसं,
नित्य प्रति विध्वंसकारी अस्त्र
मानवक चिर सभ्यताके कए रहल अछि ध्वस्त,
शान्तिमय शुभ हमर ई आदर्श—
देखाओल अछि मार्ग जगके वृद्ध भारतवर्ष ।

आइ विजयक दिन हमर अछि ध्यान
कए रहल आकृष्ट उन्नत राष्ट्र केर सम्मान ६०
तिरंगा सुन्दर पताका—त्याग, शुचि, कृषि कर्म
शुद्ध गैरिक, श्वेत, अरु हरिताम करइछ द्योत,
नील रंजित चक्र जोभित मध्य शुभ परिवेश,
धर्म-पथपर कर्म-रत रहबाक देख निदेश ।

उत्सवक एहि शुभ समयमे
प्रार्थना हम करिअ हे भगवान !

देश-गौरव बढ़ाए सभदिन,
आओर गुंजित हो सतत
नीलाभ नभमे शान्ति वदेमातरम् केर गान ॥

(२३)

शारदा विजय

“जयति ‘शंकर’ प्रवज्याचार्य !”—
व्यथित मन सुनल मैथिल-आर्य ।
सुनल सभ लोक, सभ विद्वान
देश देशक, समागत अरु पाबि कए सम्मान
छला’ श्रेणी-बद्ध बैसल, सुनल ऋषि मुनि वीर,
सुनल मैथिल वृन्द बालक युवक वृद्ध अधीर,
मन्द अरु गम्भीर ई जयकार,
सभा निर्णायक पद-स्थित शारदाक विचार ।

दीर्घ सोलह दिवस धरि शास्त्रार्थ—
श्रुति, स्मृति, वेदान्त, दर्शन सकल अर्थ पदार्थ,
विविध तर्क वितर्क, दुइ पण्डित प्रकाण्डक युद्ध,

उभय पक्ष समान, विजयी शुद्ध अरु सम्बुद्ध,
शास्त्र-चय तूणीरसँ लए वचन-शर अविराम
बुद्धि-चाप चढ़ाए छोड़िथि, विजय हित मन-काम ।
एक संन्यासी युवक शंकर छला’ विख्यात,
अपर मैथिल-मौलि मंडन मिश्र यश-अवदात ।

भेल निर्णय, भेल जयजय-कार,
 तुमुल करतल-ध्वनि प्रकम्पित भेल नभ शतवार ।
 विजय-गर्वोन्नत सकल दक्षिणक पंडित-वृन्द
 कएल सम्भाषण परस्पर मन्द, जनु मकरन्द पीबि मिलिन्द ।
 अन्य प्रान्तक पंडितहु विच छल बहुत संतोष,
 सर्व्वदा मैथिल-पराजित, हुनक मनमे क्षुद्र, ईर्ष्या-दोष,
 छल सतत, ओ आइ भए गेल शान्त,
 आइ हुनकर दग्ध हिय अछि तृप्त शान्त नितान्त ।
 अहं प्रथम निज मानहानिक दृश्य, ई परिताप,
 सकल मैथिल, विश्व, पुर नर नारि ई संताप
 सहधि नत-शिर, मोन बैसल, क्षुब्ध संज्ञा-हीन
 प्रबल वात्याहत समुन्नत विटप जनु श्रीहीन ।

सुनि निज जयकार,
 दीप्त तेज पुंज शंकर स्मित-वदन शंकर यथा साकार ! ३०
 स्थिर छला' वैसल, न किछु उद्वेग नहि उरला,
 शान्त सुन्दर मूर्तिमे आनन्दमय आभास ।

आओर सम्मुख हुनक-छल नत नम्र-मस्तक आज
 महा-महिमा-मण्डिता मिथिलाक गौरव, लाज,
 पण्डितक शिर-मौलि मण्डन मिश्र,

वेद-विद्या-निपुण वाचस्पति सदृश,
 काव्य-कविता-कौमुदी निशि-पति सदृश,
 तर्क-दर्शन-गहन-पञ्चानन छलाह अजस्र,
 दिग्विदेशक छलन्हि दिग्गज विबुध शिष्य सहस्र,
 शिष्य, उपशिष्यो जनिक विद्वत्प्रवर दुर्धर्ष ! ४०
 शारिका शुक श्रुति स्मृतिक चर्चा करए उत्कर्ष !!
 सएह मंडन मिश्र,
 विमल-यश-ज्योत्सना पराजित आज भेल तमिस्र ।
 मंत्रबलसँ शान्त, अवनत-फणि, भुजंग समान,
 अलौकिक विद्युत्-छटा सम शक्तिसँ हुत-ज्ञान,
 महाभारत मध्य शत-शर-विद्ध भीष्म प्रवीर
 सन छला' ई वृद्ध गुरु, उद्विग्न चित्त अधीर ।

तुमुल जय जयकार,
 हिनक प्रतिपक्षीक जय जयकार !
 दीर्घ जीवनमे प्रथम ई कुलिस कर्कश ध्वनि केरछ प्रहार ।
 स्तिमित लोचन, किन्तु ओ जयनाद,
 शून्य नभमे कुण्डलायित धूम्र-अक्षर बनि अनेछ विषाद,
 ग्लानि बनि साकार करइछ अट्टहास प्रमाद !
 अन्तरात्मा व्यथित कहइछ — मैथिलक जयमाल

आइ भए गेल म्लान, उन्नत वैजयन्ती लाल,
 आइ अछि अवनत, विजय यश-गान
 मन्द, नीरव, मैथिलक जे आत्मगौरव, मान
 प्रतिष्ठा छल — भेल सभटा ध्वस्त,
 हमर, मिथिला, मैथिलिक की भाग्य भास्कर अस्त !
 आओर अधिनायक एकर हम,—पराजित, धिक्कार ! ६०
 छिः हमर जीवन, हमर पाण्डित्यकेँ धिक्कार !
 अल्प बयसक युवकसँ ई हारि,
 की कहत मिथिलाक पुर नर नारि ?
 की कहत भावी हमर सन्तान ?
 जन्मभूमिक दिव्य उन्नत भाल पर देखत कलंकक दान !
 आइ संन्यासी बनव हम भारतीक समक्ष !
 छथि जखन निर्णायिका ओ मौन भए निष्पक्ष ।
 हुनक शुभ आशा लता पर ई तुषारापात,
 भेल छल की एहन कहिओ मानसिक आघात ।
 छलन्हि स्वप्नहुमे न आशंका जकर से स्पष्ट ७०
 देखि कत सन्तप्त हिअसँ सहथि मार्मिक कष्ट !
 आओर हम कारण एकर, धिक्कार,
 आइ प्रतिपक्षीक जय जयकार—

मुनि रहल छी, हम एतए हत-बुद्धि ।
युवक संन्यासीक अछि कत ज्ञान,
 की प्रतिभा, अलौकिक सिद्धि !
 सिद्धि ? सिद्धि निश्चय,.....

की स्वयं शंकर लेलन्हि अवतार ?
 आन के एहि भूमि पर अछि, जकर गूढ़ विचार
 करत हमरा मौन,— ८०
 करत मंडन मिश्र केँ शास्त्रार्थमे जे मौन ?
ब्रह्मचारी रूपमे अछि महादेवी शक्ति—
 होइछ किछु किछु भक्ति..... ।

देखि एहि विधि मौन मंडन मिश्रकेँ बहु काल,
 वृद्ध मुनि जैमिनि, सुशोभित शुभ्र-रमश्रुक जाल
 ऊठि कहलन्हि—

आर्य मंडन मिश्र ! छी अहँ धन्य,

वेद, विद्या ज्ञानमे अछि भूमि पर के अन्य

जे करत शास्त्रार्थ हिनकर संग,

ईश्वरक अवतार पुरुषक संग, ९०

यिकथि ई जे कपिल भए सांख्यक कएल निर्ममाण,

देह दत्तात्रेय-रूपे योग-दर्शन-ज्ञान,
आओर वेदव्यास द्वापरमे रचल वेदान्त,
सएह सम्प्रति देखि आर्यावत्त के आक्रान्त--
विविध नास्तिक धर्मसं, अछि लेल पुनि अवतार,
मनुज नहि ई थिकथि परमेश्वर स्वयं साकार ।
धन्य अहें केर भाग्य, विद्या बुद्धि ज्ञान विवेक,
दीर्घ सोलह दिवस धरि शास्त्रार्थ केर ई लेख,
रहत चिर इतिहासमे आचार्य,
उठु, हिनक शिष्यत्व वा सहकारिता कर्तव्य थिक

हे आर्य ! १००

शुद्ध आस्तिक सनातन धर्मक सुरक्षण हेतु
होउ तत्पर देशमे फहराउ, उज्ज्वल हेतु ।
मुनिवरक उपदेश सुनि, गत-मोह संयत-चित्त,
नम्र मंडन मिथ, विद्या-वित्त,
प्रति-श्रुत शिष्यत्व अरु संन्यास, ग्रहणक हेतु
चलल मै-केतु ।

किन्तु आसन छोड़ि रोकल, तड़ित-नारी-मूर्ति
शारदा सम 'शारदा'--छल जनिक उज्ज्वल कीर्ति,
रूप, विद्या, विनय अरु व्यवहारमे नहि आन
छल जगतमे पाआला जे सम्मान ११०-

अलीकिक शास्त्रार्थ निणयिकक उत्तम स्थान !

आओर सम्पादन कएल निष्पक्ष,
देह बांकरके विजय वर मात्य, मंडन मिथ केर समक्ष !
सहल मार्मिक व्यथा, अन्तर्वेदना अरु ग्लानि,
अपन स्वामिक पराजय,
निजकुलक अरु मिथिलाक कत बड़ हानि;
रोकि सभ उद्वेग, बैसलि मोन, घए हिय धीर,
ब्राह्मवानल ग्रीष्म अन्तः स्रोतयुत जलनिधि यथा गम्भीर ।

कहल--"मुनिवर, उपस्थित विद्वान !

हमर समुचित कथन पर दिअ ध्यान,--

१२०

विजय पाओल जगद्गुरु आचार्य,....

किन्तु ई आंशिक विजय; मम आर्य

गृही, हुनकर शक्ति हम अर्द्ध-जिनी, मध्यस्थ

छलहुँ एहि शास्त्रार्थ विच, बांकर स्वयं सन्यस्त,

ब्रह्मचारी पूर्ण छथि । ओ करधु पुनि शास्त्रार्थ

एतए, हमरा संग, अरु यदि विजय होइन्हि यथार्थ,

तखन विजयी, अन्यथा ई पराजय स्वीकार

करब नहि एहि रूप, नहि मम आर्य-देव उदार,

कए सकै छथि ग्रहण ई संन्यास वा शिष्यत्व

(३०)

शंकरक एहि विजयमे नहि रहत किछुओ तत्व !” १३०

सूनि ई दूढ़ मधुर ध्वनि गम्भीर,
दिव्यवाणी सम, प्रभावित अचल पलकहिँ धीर,
देखतहिँ रहलाह सभ किछु काल,
विजय पक्षी दक्षिणक विद्वान भेल बेहाल ।

अन्य पंडित-वृन्द वैसल शान्त,
उचित अनुचित ज्ञान-सून्य नितान्त ।

भेल मैथिल वृन्द उत्सुक-चित्त, अरु सोल्लास
जनु तिमिर छन गहन वन बिच पावि पूर्ण प्रकाश;
मनहिमन सभ अपन देवी देवता गोहूँए

शक्तिरूपा 'शारदा' पर आश दृष्टि लगाए । १४०

महा विदुषी मैथिली-महिलागणक जयकार
शारदा पक्षक समर्थन कएल तीव्र प्रकार !

दुःख पुनि आनन्दसँ बिहल परम श्रीमान

आर्य मडन मनहिमन श्रद्धासहित सम्मान,

कएल निज प्राणप्रिया अर्द्धाङ्गिनीक विशेष,

अलौकिक-प्रतिभा समुद्भासित बदन अनिमेष

देखि रहला मोन ।

विजयी शंकरक स्थिर बुद्धि

(३१)

भेल किछु विचलित; हुनक विज्ञान, विद्या, सिद्धि,
आइ देखल प्रथम नारी मूर्ति १५०

शारदा वा भारती प्रतिमूर्ति !

किन्तु किंचित विजय-मद, पुरुषत्व-भावावेश,
धीर मृदु शंकर कहल—“हे देवि ! किछु अवशेष

रहल नहि निर्णय करक; यद्यपि एहन शास्त्रार्थ

अरु अहेक प्रतिभा, विग्रह वेदुष्य, ज्ञान यथार्थ

प्रथम हम देखल एतए सानन्द,

रहत विरम स्मृति-पटल पर शुभ्र ज्योति अमन्द ।

किन्तु भारति, देवि ! पुनि किञ्च व्यर्थ बार-विवाद,

व्यर्थ पुनि शास्त्रार्थ केर प्रमाद, १६०

व्यर्थ पुनि किछु दिवस होएत नष्ट—

की प्रयोगन जखन निर्णय ज्ञान अलि सुस्पष्ट ?

आओ—पुनि आर्यसँ महिला संग

होइल अनि यत्न, सम पुण्यन, ब्रह्मज्ञानपर ई व्यंग

व्यर्थ जनु कक दीप, कक युक्तिवार,

बलशुभ्र हमरा संग पाइत प्रवर मित्र उतार ।”

हुन कजर जायदा “शंकर, परम धीमान !

उचित नहि आल अहेक ई अभिमान—

अपन निश्चित विजय, अरु पुरुषत्व, निज विज्ञान
मोह-वश अहं कएल नारी नारी केर अपमान, ।
इष्ट वीणापाणि शक्तिक रूप, १३०
ब्रह्म-वादिनि भेल छथि मार्गी, हुनक अनुरूप
अनेको विदुषी एतए जे वेद-ज्ञान-प्रकाश,
देल जगके, जनिक उज्ज्वल कीर्तिसँ इतिहास
रहत चिर भासित; हुनक महिलागणक अपमान,
ब्रह्म-ज्ञानी पुरुष राखथि हेय दृष्टिक ध्यान !
उचित नहि ई अहं सन आचार्य,
नहि उचित त्यागन कार्य ।”

उचित बृक्षल लोक सभ, अरु कएल शिर संकेत,
महा मुनि जेमिनि, विहसि शुभ शाधुवाद समेत ।

चलल पुनि शास्त्रार्थ प्रातः काल, १५०
स्निग्ध रवि अरुणाभ रश्मिक जाल
कएल उद्भासित वृहत् मंडप, जतए बुध वृन्द,
शास्त्र-मधुरस पीबि भूमयि मन्द,
मधुर दक्षिण गन्धवह-दोलित यथा अरविन्द ।
आओर दिन प्रतिदिन क्रमहि बीतल समुत्सुक काल,
शारदा शंकर स्वयं साकार ।

मथथि जनु श्रुति स्मृति पुराणक ग्रन्थ,
हो न किछु निर्णय, विवादक अन्त ।
तखन विदुषी चतुर पूछल प्रश्न—
काम-शास्त्रक गूढ़ विषयक प्रश्न; - चिन्तामग्न १६०
भेल ‘शंकर’ मोन, अतिशय व्यस्त
शैशवहिसँ ब्रह्मचारी, मुक्त ई संन्यस्त,
पढ़ल श्रुति स्मृति, योग दर्शन सकल शास्त्र पुराण,
कएल तप, अरु पाओल कत अनुभूति, ब्रह्म-ज्ञान—
किन्तु रहला’ सतत विश्वक सृजन-ज्ञान अबोध,
आइ नारी लेल निज मायाक बल प्रतिशोध ।
जगत वासीकेँ गृहस्थाश्रमक ज्ञान नितान्त
होइछ आवश्यक, तखन अद्वैत केर सिद्धान्त
सृष्टिचालनमे करत व्याघात—ई भेल सिद्ध ?
ग्लानि अरु परिताप कंटक-विद्ध २००
रुद्ध-स्वर शंकर कहल,—“हम पराजित छी आज;
अन्य अहं केर बुद्धि, विद्या-चातुरी, अरु व्याज
कएल हमरा मूक; प्रश्नक उचित उत्तर जन्य
एक वर्षक समय-भिक्षा-दान चाहिअ, अन्य
रूप धरि ई काम-विषयक ज्ञान

सीखि आएब, देव उत्तर यथा विधि सज्जन ।”
 विहुँसि कहलन्हि शारदा,—“आचार्य,
 एक प्रश्नक हेतु दोसर जन्म ग्रहणक कार्य्य ।
 की प्रतिज्ञा छल एतए हे आर्य्य ?
 पराजित भए जाथि विजयिक शिष्य—
 केहन होएत दृश्य

२१०

यदि अहँ आज,

छोड़ि निज संन्यास व्रत मिलि जाइ वर्ण समाज ?

किन्तु से मम इष्ट नहि, अहँ वत्सरक उपरान्त,
 मृष्टि गति विधि अविद्या-संक्रान्त
 पूर्ण ज्ञानी बनि एतए पुनि आउ,
 आर्य्य मिश्रक संग धर्मक पताका फहराउ ।”

मुदित शंकर, स्मित-वदन स्वीकार
 कएल; जय जय धन्य मिथिला, मैथिलीक विचार ।
 मुक्त स्वरसँ सबहिँ गाओल शारदा-जयकार ॥ २२०

मानभूमि

हे मानभूमि !
 ई मानभूमि ?
 की मान एतए, की ज्ञान एतए, की शान एतए ?
 अछि चुष्क रुक्ष पथराह भूमिमे
 केवल कोइला खान एतए !
 अछि कारी कारी अर्द्ध-नग्न,
 अछि अन्ध-गर्तमे कार्य्य लग्न,
 मानव शोषण अभिशाप मग्न—
 शत शत बनिहारक प्राण एतए ॥
 ई शत सहस्र बनिहार एतए ।
 एक छोट कोठरी जकर भवन,
 नहि ज्योति न वायुक जतए गमन,
 संकोच लाज तजि दश दश जन,
 बितबैछ राति दिन जन्म-मरण,
 कलुषित चरित्र, कलुषित जीवन,
 कलुषित एहि कारी भूमिभागपर
 मनुज कीट साकार एतए ॥

१०

ई मनुज कीट साकार एतए !
 पाथर कोइलापर जन्म लैछ,
 नहि शुद्ध वायु, जल, दूध, अन्न—
 तन-पोषक सामग्री पवैछ,
 माइक सिनेह बायक दुलारसँ वंचित शिशु कहुना बदैछ ।
 एकरा नहि विद्या, बुद्धि, ज्ञान,
 कारी अक्षर कोइला समान,
 बारहम वर्षसँ लए गेता, पथिआ माथा धए चलए खान ।
 भू-गर्भ-गत अति अंधकार,
 अवरुद्ध ऊष्म अरु विषम वायु,
 धामार्त्त देह भए निर्विकार,
 दुइ तीनि पहर घरि अथक परिश्रम कएनिहार ई थिक गड़ार !
 ऊपर अबितहि ताड़ी, गाँजा, मदिरा चढ़ाए भए दुनिवार, ३०
 घरपर अपनहिमे गारि मारि गंजनसँ बितवए शेष काल—
 एहि भाँति जन्म अरु मरण जकर,
 जीवनमे नहि सुख शान्ति जकर,
 सुख भोग विलासी पूँजीपति बिच
 मलिन एकर संसार एतए !!
 अछि व्यवसायी धनवान एतए—

अछि शत शत लक्षाधिप महान,
 लखि जकर बगए नहि देव ध्यान,
 नहि विद्या, नहि आत्माभिमान,
 छै' किन्तु बैङ्कमे लक्ष लक्ष,
 लक्ष्मी सेवामे पूर्ण दक्ष,
 अनकर श्रमसँ पोषित तुन्दिल,
 शत शत मानव पाषाण एतए ॥
 अछि हृदय-हीन धनवान एतए !
 अपनाले' रम्य विशाल सदन,
 जल झरना, बिजुली-ज्योति, वायु,
 सम शीत ताप, सभ सुख साधन,
 भोजन रुचिकर, फल फूल मधुर,
 पुनि विविध प्रकारक मत्स्य मांस,
 चटनी अँचार, पापड़ कुड़कुड़,
 शीतल सुवास युत जल,
 अङ्गूरक अरुणिम मदिरा पेय प्रचुर,
 चलइछ प्रति संध्या भोज—
 पुष्ट होइछ कते' कौआ-कूकुर;
 चलबाले नव मोटर सुन्दर,

संगीत रूप लोलुप प्रतिदिन चलचित्र नाच वा नाटक घर,
 अथवा कलवमे जूआ अरु तासक वशीभूत रहि पहर पहर,
 कए नष्ट समय, कए नष्ट देह,
 सद्बुद्धि आओर कोमल विचार,
 कृश मलिन बुभुक्षित नग्न बेचारा बनिहारक श्रम रक्त-धार-
 सें सींचि विलासक मधु उपवन,
 राक्षसी - वृत्ति - सुखमय जीवन,
 बितबए एहि यंत्र-युगक चालक
 पाबए सभसँ सम्मान एतए ।
 हे मानभूमि,
 कत कोटिवर्षसँ प्रकृति घरा बिच संघर्षणक प्रमाण भूमि !
 ई विगत बाल्य-वसुधाक सघन हरियर अंचल,
 शत विप्लव वन्यासँ प्लावित पंकिल दलदल
 कए बेर घरातल बनल, रसातल उगल डुबल,
 कत भीषण ज्वालामुखी विनिर्गत बह्लि विकल— ७०
 पघिलल भूगर्भ पदार्थ, अग्निमय धातु बहल,
 ई महा वृद्ध—विन्ध्यक वयस्क, कत खनिज उपल
 सङ देखल सृष्टिक चलित चक्र,
 वनि नाश आओर निर्माण भूमि ।

ई नाश आओर निर्माण भूमि,
 ई मानभूमि !

कत प्रकृतिक अत्याचार सहन कए पाओल खान,
 त्यागी दधीचि, शिव, कर्ण सदृश-दानी महान-
 ई देख स्वयं नरकान्धकार बिच रहि, जगतीकेँ ज्योति-दान,
 आधुनिक यन्त्र युगमे स्वतन्त्र भारतवर्षक ई प्राण भूमि ।
 ८०

की त्याग तपस्या विफल होएत ?
 की पशु मानव सभ सफल होएत ?
 नहि,—नवयुगमे शुभ परिवर्तन,
 नव जागृति अरु उन्नयन सङ्ग
 ई बनत सभक उत्थान भूमि—
 ई मानभूमि ॥

‘कातिक धवल तिथि त्रयोदशि.....’

कातिक धवल तिथि त्रयोदशि विद्यापतिक अवसान,

ई थिक पुण्य पर्व महान,

ई थिक पुण्य पर्व महान ।

जग-जननि-जानकि-जन्मभूमिक मैथिलिक उद्यान,

कवि कोकिल कल काकली कूजित सरस मृदु गान,

कीर्तिक लता वृत्त वितान....ई थिक पुण्य पर्व महान ।

लक्ष्मीश ‘शिव’ मिथिलेश जनिकर मित्र अनुकरणीय,

फहरा रहल छल शुभ्र कीर्तिक पताका कमनीय

ई मिथिलावनी रमणीय....ई मिथिलावनी रमणीय ।

शृंगार रससँ सित्त प्रेमक बीज वपनक गीत

रचल राधाकृष्ण पद रत मधुर पद्य पुनीत,

गाओल भक्तिमय संगीत....गाओल भक्तिमय संगीत ।

उगना जनिक बनि कएल सेवा-वृत्ति शिव स्वीकार,

जनिक इच्छासँ बहल सुरसरिक नूतन धार,

भक्तिक ई परम उद्गार....भक्तिक ई परम उद्गार ।

आइ हुनकर चरण कमलक चिह्नकेँ धए ध्यान

मातृ-भाषा प्रति करिअ श्रद्धांजलिक शुभदान

ई थिक पुण्य पर्व महान....ई थिक पुण्य पर्व महान ।

जरत्कारु उपाख्यान

जरत्कारु मुनि तपमे लीन,

सुभग सबल तनु कएलन्हि क्षीण ।

बाल ब्रह्मचारी जप-लग्न,

वेदाध्ययन, ब्रह्ममे मग्न ।

कएल पर्यटन भरि संसार

भेल न कहिओ काम विकार ।

सोचथि व्यर्थ दार परिवार,

रहता’ ओ आजन्म कुमार ।

धूमधि पृथिवी पर निर्भीक

ऊर्ध्वरेत जनु अग्नि प्रतीक ।

दिन भरि चलि संध्या जेहि ठाम

रहथि राति भरि जपि प्रभु नाम ।

तीर्थ बर धूमधि बहु देश

निराहार, सहइत कत क्लेश ।

देखल एक दिन - गहिँइ इनार

तहि बिच अछि एक कतरा झाड़-

ओकरा धएने कए जन दीन

नीचा मुह लटकओने क्षीण ।
 अरु कतरा झाड़क जड़ि तन्तु
 कटइछ बिहरिक मूषिक जन्तु ।
 कंपइत हुनका सभके देखि
 मुनिके उपजल दया विशेषि ।
 पूछल - 'अहाँ सभक ई हाल !
 झाड़क टुटइत खसब पताल ।
 हमरासँ यदि हो उपकार
 जप तप धर्म देव स्वीकार ।'
 बजला ओ सभ—'अहँ छी वृद्ध,
 बाल - ब्रह्मचारी तप-सिद्ध ।
 बुझि पड़इत अछि नहि उद्धार,
 धर्म, तपस्या, ज्ञान विचार
 अछि हमरहुँ; ई गति दयनीय
 वंश - च्छेद - जनित स्मरणीय ।
 ब्रह्म वाक्य जे - बिनु सन्तान
 गति नहि हो मनुजक मतिमान ।
 नहि चिन्हि सकलहुँ अहँके देव,
 नहि किछु मनमे एकरा लेब ।
 हम सभ यायावर ऋषिराज,

२०

३०

जप तप धर्म कएल बहु काज,
 पाओल स्वर्ग, किन्तु ई हाल
 बिनु संतान सूत्र; ई काल
 मूषिक संतति - तन्तुक छेद
 करइत अछि, होइछ अति खेद ।
 एक मात्र जीवित संतान—
 जरत्कार ऋषि विज्ञ महान !
 ओ नहि ग्रहण करै छथि दार
 नहि बड़बथि निज कुल परिवार !
 हुनकर मृत्युक बाद तुरन्त
 हम सभ नरकक गत अनन्त ।
 यदि हुनका कहिअन्हि अहँ जाए
 मानब बड़ उपकार सहाय ।'

४०

५०

शोकित, खेदित, सुनि ई बात,
 कहलन्हि—'क्षमा करिअ हे तात !
 हमही थिकहुँ अहँक सन्तान
 जरत्कार, पापी अज्ञान ।
 छल हमरा बड़ दम्भ यथार्थ—
 ब्रह्मचर्य तप मात्र पदार्थ

जगमे विप्रक बूझल कर्म
नहि जानल ई धर्मक मर्म ।
क्षमा करिअ, हे पितर महान,
करब विवाह, होएत सन्तान ।

६०

किन्तु अपन नामक कन्यासँ करब विवाह,
अरु करबन्हि नहि हुनकर हम निर्याह ।
भेटथि यदि भिक्षा-रूपे ओ अपनहि आबि
तखन करब स्वीकार, सुखि शुभ नारी पाबि ।”
ए पितरक आशीष चलल ऋषिराज
धूमल बहुतो ठाम विवाहक काज ।
किन्तु एहन बुढक सङ कन्या नहि केओ देल,
जरत्कार खेदित अति चिन्तित भेल ।
तखन एक दिन — जंगलमे गम्भीर
स्वरसँ बजला, तीन बेरि, मुनि वीर ।
“सुनु सभ लोक, चराचर दृश्य, अदृश्य,
पितर गणक अछि पुनरकान्ध भविष्य !
हुनकर उद्धारक कारण हम आज
भिक्षा चाहिअ बार, अपत्यक काज ।
हमरहि नामक कन्या-रत्न

७०

केओ जन भिक्षा देखु सयत्न,
हुनक भरण-पोषण सभ भार
लेखु उठाए — करथु सुविचार ।”

मुनिक वचन सुनि नागदूत सभ कहलन्हि जाए—
“नागराज, जल्दीसँ हुनका लिअ’ मनाए ।

८०

भङ्तराह सन बूझि पडैत छथि योगीराज,
किन्तु करब की, साधक अछि निज काज ।”

वासुकि अपन बहिनिके कहल बुझाए,—

“अहँक कृपा बिनु अछि नहि आन उपाय ।

जनमि राजकुल, भोगल सभ ऐक्यर्थ महान,

आइ अहाँकेँ दए रहलहुँ अछि भिक्षा-दान ।

मनमे नहि आनब अहँ एहि ले’ रोष,

करब - अहँक सन्तानक सभ दिन पोष ।

कुल रक्षा-हित उचित करब सुख त्याग,

एहन तपस्वी पति पुनि, बुझु बड़ भाग ।”

९०

चार चीर हेमाभरण अति कमनीय कुमारि,

सोदर सङ अइलीह बन, जरत्कार सुकुमारि ।

वासुकि मुनिवरकेँ कहल—“अहँक वचन अनुसार

अनलहुँ अछि हम बहिनिकेँ, कृपया कर स्वीकार ।

चबु हमरा सड विप्र-देव, अरु करिअ विवाह,
सुख पूर्वक अपने सभहिक होएत निर्वाह ।”
कहलन्हि ऋषिवर—“मुनु अहिराज ! हमर एक बात,
अप्रिय काज करथु नहि कहिओ ज्ञाताज्ञात ।
जहिए एहि बातक उल्लंघन होएत अनन्त,
त्यागि गृहस्थक जीवन हम चल जाएब तुरन्त ।” १००

नागराज सभ किछु कएलन्हि स्वीकार,
भेल मन्त्र-युत पाणि-ग्रह संस्कार ।
ऋषि मुनि सभ वरिआती दए आशीष,
लए विदाइ मेला’ गृहस्थ बनला’ योगीश ।
वासुकि भवन जाए ऋषि राज
लगला’ करए अपन सम काज—
एतहु सतत पूजा जपलीन
ईश्वर चिन्तन कार्य प्रवीण ।
पति आज्ञा पालन दिन राति
करथि प्रसन्न चित्त सम भाँति ।
चेष्टा काक, चकित सारंग,
निद्रास्वानक, छाया संग
जरत्कार पति-सेवा-कर्म

तत्पर रहथि स्वजीवन धर्म ।
एहि विधि बीतल वर्षक वर्ष,
ऋतुमति, स्नात, पाओल पति-स्पर्श ।
हर्ष चित शुभ गर्भाधान
भेल, कृपा कएलन्हि भगवान ।
शुक्ल शशिक सन नित वद्धिष्णु
वैश्वानर सन कान्ति भविष्णु,
मुनि-औरस धारण कए देवि
अति प्रमुदित मन पतिके’ सेवि ।

कुसंयोग-वश दिवस एक मुनि खिन्न मोन एकान्त
पत्नी अंक निशंक सूति रहला’ विभोर भए क्लान्त ।
किछु कालक उपरान्त अस्त-गिरि चढ़ल कमलिनी-कान्त
पति कर्म-च्युति भयसँ सुन्दरि चिन्तित भेलि नितान्त ।
निद्रा भंग करब अनुचित, पुनि अनुचित धर्मक त्याग,
हिन स्वभाव अछि ज्ञात, ज्ञात पुनि धर्मक प्रति अनुराग
जे होएत से सहब पराभव, शोचलि शंकित चित्त
कहल—“भानु अस्तमित, तपोनिधि उठु सन्धाक निमित्त !”
काँच निन्न दूटल घबड़ाएल क्रोधातुर मुनि भेला’

(४८)

कहल—“किए तोड़ल मम निद्रा एहि रूपक अवहेला !
अहँक कोरमे पड़ल छलहुँ हम भार एतेटा भेलहुँ ?
उचिते सभ अपमान जखन नृप-घर-जमाए हम भेलहुँ !!
वेश, आइए चललहुँ हम छोड़ल अहँके सुकुमारि,
रहु सुखसँ, हमहुँ पुनि वनक तपस्वी-ज्ञान-भिखारि ।”
मुनिक कुलिश वचनक प्रहारसँ भग्न हृदय-दृग नोर,
डरसँ थर थर कँपइत भामिनि पति-मुख-चन्द्र-चकोर,
चरण गहल अरु कहल—“नाथ ! अपनेक धर्म रक्षार्थ
कएलहुँ ई अपराध, क्षमा कर, क्षमा विचारि यथार्थ । १४०
पति-त्यक्ता जीवन वर-नारिक होइछ बड़का भार,
सहब कोना हे देव ! कोना काटब जीवन निस्सार ?”
भए प्रकृतिस्थ कहल ऋषि “सुभगे ! हमर अर्घ्य विनु अस्त,
होइतयि सूर्य ? असम्भव ! जानथि कर्मठ लोक समस्त ।
अस्तु ! अहँक नहि दोष, किन्तु जे होएब’क छल से भेल,
थिक ई दैव विधान, जकर बश होइछ माया खेल ।
एतए भोग-वश किछु आलस अवइत जाइत छल तनमे
दिवस काल निद्रा प्रगाढ़ ! अरु मन किछु आन व्यसनमे ।

(४९)

तपश्चर्य नाशक ई सभ थिक, त’ जाएब हम वनमे—
प्रारब्धक अनुसार ईश इङ्गिति ई बूझब मनमे । १५०
अद्यावधि मिथ्या भाषण हम कएल न हे वर नारि
गर्भ-स्थित बालक होएता’ दुहु कुल रक्षक सुकुमारि ।’
ई कहि छोड़ि चलल ऋषिराज—
जरत्कार मन चिन्ता लाज ।
शोकानुर अति नृप-गृह जाए
कनइत सोदर कहल बुझाए ।
मुनितहि’ वासुकि चिन्ता मग्न
कहल बहिनि-जे स्वयं विपन्न—
‘की कएलहुँ ? बूझल छल बात
सर्प-यज्ञमे अहँसे जात १५०
पुत्र करत नागक कुलत्राण
ब्रह्म-वाक्य ई—वचन प्रमाण !
की भवितव्य न किछु हो जान,
रक्षा कोना होएत भगवान !
कहु ! किछु, उचित न पूछब अहँके देवि !
पाओल फल किछु, एतबा दिन धरि पतिके सेवि ?
हुनक स्वभाव, ज्ञान, सामर्थ्य

(५०)

आनल अछि, हुनि पाछी व्यथं
दोड़व थिक,—खिसिआकए शोष
दए सकेत छथि,—नव सस्ताप ।

१७०

कहु किछु अपन पतिक शुभ भाव
जहिसँ हृदयक हँटत दुराव ।

जरत्कार संकुचित सजान,

आश्वासन युत वचन प्रमाण

बजली' — 'गर्भवती' छी भाइ,

अछि ई पुत्र-कहल पति आइ ।

हुनक धर्म कर्मक सभ बात

जाते अछि अहुँके हे तात ।

कथमपि वचन न होएत असत्य

हमरा अछि विश्वास; अपरेव

हमर करत दुहु-कुल उद्धार

कहलन्हि अछि पतिदेव उदार ।

हमरा छल जे भोगक भोग

कएल, करब पुनि एहिले सोग

अहाँ करिअ जुनि, उठु कर काज,

प्रभुक भरोस राखि, करु राज ।

१८०

(५१)

वासुकि स्वस्थ चित्त, सस्नेह,

रखलन्हि हुनका अपनहि मेह ।

साधन सुविधा सतत सयत्न,

जरत्कार जठर-स्थित रत्न

बढ़ल शुद्धि शशि-कला समान

जनमल तेजोमय भगवान ।

'अस्ति'—मुनिक वचनक अनुसार

नाम पड़ल 'आस्तीक' कुमार ।

पति आदि — पति आदि

उपनयनक वादहि सुन्दर बटु ऋषिआश्रम चल गेली

ब्रह्मचर्य सत्य-व्रत विद्याध्ययन सुतस्वर भेला

भागव च्यवन महामुनिसँ तकि शास्त्र-अङ्ग सभ वेद

०० स्नातक भए वासुकि गृह रहि ओ हरल-उरग-कुल खेद ।

पति आदि — पति आदि

पति आदि — पति आदि

पति आदि — पति आदि

(५२)

सौन्दर्य बोध

विशेष आमन्त्रण पर
गेरु छलहूँ मित्रक घर ।
नवनिर्मित सौध,
रम्य शादल, वह विधि प्रसून
प्राङ्गण बिच शोभित अछि.... ।
भव्य भवन — बाह्य अंग
इषत् नभ नील रंग,
ओसारा केरि भित्ति सकल
शुभ्र हिम कान्ति अवल,
पद्मा सभ मरकताम
चिक्कन अति, अरुणाभ
परावर्त्तक स्फीत 'फर्श' मोजाइकक जाली युत
कारी किनारी देल, कमर पत्री रंगक जनु
नाइलोन केरि साड़ी हो ।
वातामन, द्वार पर
चीनांशुक चम्पक द्युति
बारदर्शक आवरण....
सभ किछु अति शुभ्र-शाभ्र,

१०

(५३)

सभ किछु आह्लादकर
सभ किछु नयनाभिराम.... ।
देखै छी;....

२०

मुख्य मुख्य स्थान पर
सात गोट गमलामे सात गोट उद्भिद—
उद्भिद वा जड़ पदार्थ !
विचित्र रूप — कंटिनी,
कंटकित की ?...कण्टकमय !
सर्पाकृति, खूर्पाकृति
कीटाकृति, बेडाकृति
ठेडाकृति, आओर किछु
छोट छीन — ठेडाकृति....
ई की वीभत्स-रूप !
बूझल नहि ? कैस्टस !
ई थीक आधुनिक
भद्र दृष्टि आकर्षक,
भवनक शोभा-वर्धक ।
गुलाब वा वेली नहि,
झूही चमेली नहि,

३०

(५४४)

बाहरसँ कंटकित, भीतर सुगन्धित अति
केतकी वा केओला नहि;
ई थीक कैवटस—
पत्र वा पुष्प-हीन,
सुगन्ध दुर्गन्ध हीन,
अभिवाप्त, दुखी दीन,
मरुस्थल निवासी सतत उपेक्षित विघातासँ
पओलक अछि आइ ई त्राता सभ्य जगमे ।

मुख हम भेल छलहुँ भवनक कला कौशलसँ,
क्षुब्ध कएलक अतीव नूतन सौन्दर्य बोध !!

(५५)

प्रतीक

आधुनिक यंत्र-युगक हम छी प्रतीक, बन्धु !

दीर्घाकृति लम्बरूप,
नभचुम्बी उर्ध्वमुख,
संयंत्रक द्योतक हम,
तर्जनीक इङ्गिति सभ ।

अभियन्तृ -- आकल्पित,
सुविशेषित, रूपाङ्कित,
उत्तम कला नार अरु शिल्पीगणसँ निर्मित
महामान्य पूजित भए

विस्तृत आधार हमर—दृढ़, प्रस्तर-लोह-बद्ध; १०

ईट अरु बज्रलेप,

सिकताकण, उपल-घूर्ण,

जल-संग घूर्णित भए

मिश्रित भए सम्यक् भाव,

उत्तम उपकरण मात्र

रचलक अछि हमर गात्र ।

यथासाध्य चिक्कन, सबल अरु आकर्षक

बनल अछि बाह्य अंग
अद्भुत किछु रूप रंग ।....

किन्तु मम अन्तरङ्ग
रिक्त अछि, तुच्छ अछि,
आर्द्र-कण-सिक्त नहि, मार्दव-हीन,
स्नेह-रस-हीन अह छुच्छ अछि ।
केवल-कलुष-पांशु युक्त
रुक्ष शुष्क दुर्गन्धित
दुस्सह उत्तप्त धूम
अहरह बहइत अछि
जरबै' अछि हमरा—
अन्तर्दाह भीषण अति !

शिशिर शीत, आतप ताप,
झंझा, आसारहुके
सह्यकरी युग युग धरि
नितान्त आवरण-हीन
प्रलयंकर प्रभञ्जनमे
निश्चल समाधि-लीन ।
देखल की एहन रूप ?

२०

३०

सोचल की जीवन एहन ?
दावानल-अचानक हो, आओर समय-सीमा ।
ज्वालामुख, बड़वानल — यदि कतहु,
विधि - विधान ।
किन्तु सम्य शिक्षित विवेकी कत मानव मिलि
बुद्धि, विज्ञान, ज्ञान
विपुल धन, बल लगाए
कएलक हमर निम्माण !

सोचै छी,
हम की प्रतीक थिकहुँ
अथवा प्रक्षेप विकृत
आधुनिक सभ्यताक !
बाहरसँ चाकचिक्य
उन्नत शिर दम्भपूर्ण,
दूर दृष्टि आकर्षक,
किन्तु अति मलिन हृदय
अन्तस्तल दह दह जर
करुणा - रस - स्नेह हीन !

४०

५०

(५८)

रिक्तः सर्वो भवति हि लघुः

'रिक्तः सर्वो भवति हि लघुः'

मेघक प्रति कहने छथि

कवि-कुल-गुरु कालि-दास ।

वेतहास जाइत छलहुँ मोटर पर,

दृष्टि उठल ऊपर

उत्तरार्द्ध शरद समय

अनुत्पन्न रवि - किरण

उद्भासित दिग दिगन्त

नभ अनन्त नीलाभ

शान्त रमणीय रूप ••• ।

कतहु कतहु उँच—

बहुत उँच दूर पर

तुच्छ किछु अभ्र-खंड

मन्द मन्द गतिसँ

जाइत अछि यत्र तत्र

जाइत भूमिआइत अछि,

क्रमशः बिलाइत अछि

होइत अछि विलीन

(५९)

कतहु दृष्टि पथ सीमा हीन

शून्य महा शून्य मे !

ई थिक शरद मेघ !

निस्तेज, अन्तस्सार-हीन हल्लुक

अनावश्यक लोकक हेतु,

नितान्त अनाकर्षक !

किन्तु, जखन ग्रीष्ममे

दीर्घ-दाध संतप्त

आकुल धरित्री अरु व्याकुल छल जीव जन्तु

भीषण अकाल-वस्त,

आर्त-करुण-प्रार्थित-स्वर—

सान्ध्य-क्षितिज कोर पर

प्रकटल घन खंड एक,

सभक दृष्टि आकृष्ट

भेल, आश संचार,

सृष्टि रक्षकक रूप देखल नव जलधर ।

वस्तुतः 'बीज' ओ केन्द्रक छल,

मेघक ओ क्षुद्र खंड

किञ्चित् पीताम्ब प्रथम
 क्रमशः पुनि धूमिल भए
 बढ़ल गेल - पसरल गेल
 व्याप्त भेल आकाश— ४०
 गाढ़ श्याम रंग दम
 दामिनी दमकल छल,
 धहर धन गरजल छल,
 बरसल जल धराधर !
 शान्त भेल आतप ताप,
 पादप शाख मुकुलित,
 रसमय कत फल रसाल,
 प्रमुदित सभ जीव,
 धरा अंकुरित रोमांचित ।

श्रावण धन बारिवाह १०
 समीरण रथारूढ़
 संचरल दिग दिगन्त—
 दुर्गम गिरि श्रेणि,
 सघन अरण्यानी, प्रान्तर सम,
 मालव उपत्यका,

समस्त नभो मण्डलके—
 कएल निज पदाक्रान्त,
 शान्त कएल ताप पाप
 विद्युत करवाल अरु कठिन अशनि घातसँ,
 जीवन-रस पूर कएल सरित सर वापी कृप ६०
 आषाढक प्रथम सान्ध्य-
 क्षितिजिक स्तनयितु-बीज
 ओएह सघन बारिवाह,
 यौवन-रस-मत्त हस्त-नक्षत्रक संज्ञावात !
 आइ ई शरद मेघ—
 मात्र तुच्छ अभ्र-खंड
 निश्शक्ति, निस्तेज,
 मन्थरतम गतिसँ
 जाइत भसिआइत अछि,
 जाइत भसिआइत अछि,
 देखै' अछि—स्वर्णिम शालि ७०
 शक्य भरल आंचर युत,
 हरित वसन विविध सुमन भूषित वसुन्धरा—

(६२)

आश उल्लास पूर्ण
जन-गण-मन पर्व लीन !

रिक्त-हस्त मेघ, लघु—
हल्लुक भए गेल अछि....
जाइत विलाइत अछि
होइत अछि विलीन....

किन्तु
जीवनक की गरिमा !
केहेन ई महिमा !!

(६३)

लागल अछि कुहेस

लागल अछि कुहेस—
माघ मासक ई भीजल जाइ
हाइ कपबैत अछि ।
दीघं राति बीतल,
कतहु दूर कुजड़टोलीसँ
'कुकरू - कू'क आवाज
एक दू बेरि मात्र
पड़ल अछि कानमे ।
देलक अछि अजान
बृद्ध एकाकी मौलवी
महिजदक गुम्बज चढ़ि—
पुनि गेल प्रायः सीरक तर ।
....किन्तु हम सुनैत छी
लगक ओहि आङनसँ—
बूढ़ि बाबोक शीत-कम्पित-स्वर-मुखरित
विद्यापति, सूर, तुलसीक कत प्राती गीत....
बुझै' छी रात्रि अवसान—
दीघं रात्रि अवसान.... ।

(६४)

खोलै, छी आँखि—
प्राची दिशामे प्रकाश नहि,
दमकैत चमकैत
ज्योतिष्मान शुक्र
ओ! भुङ्कुवा कहाँ कतहुँ ?
आनो नक्षत्र नहि,
जन-जीवन-ज्योति
उषा-अरुणिमाक लेश नहि,
खगकुलक कलरव
वा कौओक कवर्कश स्वर
धुनवामे नहि अवेछ—
लागल अछि कुहेस" !

लागल अछि कुहेस" !
धरा आकाश अस्पष्ट
सभ किछु अगोचर,
सभ जीव-जन्तु स्तब्ध-प्राय ।
केवल किछु कालपर
केराक पातसँ
टप टप टप जल-विन्दु

२०

३०

(६५)

खसवाक क्षीण शब्द बुझवामे अवेछ,
जेना रजनि भरि प्रतीक्षामे
चिर जागरण क्लान्त
शान्त शयन कक्षमे
उपेक्षिता रमणीक करुण मोन अश्र-पात हो !

लागल अछि कुहेस—
एखन प्रकाशक किछु लेश नहि,
आओर नहि अन्धकार ।
अन्धकारक गौरव छेक—
'कज्जलक पहाड़'सन
तरुणीक कुन्तल वा
घनश्याम अन्तस्तल, कलिन्द-तनया सदृश
श्रावण अमारात्रि सघन घन आच्छादित
निविड़तम अन्धकार
रखै' अछि महत्व,
अपन अस्तित्व बुझबै' अछि
दामिनिक दमक अरु गम्भीर गज्जनसँ !

किन्तु ई कुहेस,

४०

५०

मात्र क्षुद्र जल वाष्प-कण
 स्वयं निःशक्ति, गति-हीन, अरु निस्तेज,
 पांशु वा कलुष-अणु-केन्द्र-संलग्न
 अछि लटकल, अधोमुख अभिशप्त त्रिशंकु जेकाँ—
 रचलक अछि कुहर जाल, ६०
 माया आवरण सन
 झपने अछि पृथ्वी केँ;
 रुद्ध ई करैछ अरु प्रत्यावर्त्तित करैछ
 बाह्यक प्रकाश पुञ्ज,
 निकटस्थ वस्तुओ अवइछ नहि दृष्टि पथ,
 स्वच्छो मुकुरकेँ करइछ ई मलिन,
 अरु स्वरूपकेँ हम देखि नहि सकै छी ।

प्रलयक पश्चात्—
 अखिल अणु-जल-राशि-वाष्प
 सिरजल की इएह रूप ?
 सूर्य वा चन्द्रमा
 अथवा नक्षत्र गण
 ज्योतिष्कण कतहु नहि,
 आ' ताही दिशि लक्ष्य कए कि

स्तुति वाक्य मुखरित भेल—
 “तमसो मा ज्योतिर्गमय” !
 आएल प्रकाश क्रमहि पृथिवीक ऊपर
 अरु जीवन-जीव विकसित भेल ।
 मानव सुशिक्षित भेल—
 शिष्ट समुन्नत ओ सभ्यता सम्पन्न भेल ६०

एखनको कुहेस ई
 साधारण प्राकृतिक—भौतिक विपर्यय मात्र
 किछुए सयमे ई क्रमशः अपसृत होएत,
 देखव हम आलोक
 होएत ऊर्जित शरीर ।

किन्तु अति शक्ति-चित्त,
 मुद्रित नयनसँ हम
 देखै छी—दम्भ कपट
 दम्प अरु अहंकार,
 (बैयक्तिक, दैशिक नहि—समस्त भूमण्डलक) ६०
 विज्ञानबुद्धि-जात
 भयंकर कुहेस—
 जे मानसिक-आकाश

माय्य आधार धरा
 आवृत कएने बढैछ,
 गाढतर प्रगाढतम.....
 लागल अछि कुहेस !!
 मनुज देखए नहि अपन रूप,
 वाहक प्रकाश पुञ्ज,
 अन्तरक ज्योतिष्कण
 भासित नहि अग्रिम पथ.....
 लागल अछि कुहेस !!!

(४५)

मेहक बड़द जेकाँ

सूर्य छथि ग्रहेश—
 सौर-मंडलक ग्रह गण
 आकर्षण-बद्ध

भिन्न कक्षामे घुमैत छथि,
 पबै' छथि अजस्र ज्योति,
 स्वयं ओ महान्, हुनक धूमिग गति स्थूल तम ।

हमहूँ गृहेश छी ।
 परिवारक सम्बन्धसँ बान्हल
 कत व्यक्ति

हमर सङ्ग-सङ्ग घुमैत छथि, १०

पबै' छथि साहाय्यकिछु,

हमहूँ घुमैत छी

मेहक बड़द जेकाँ,—

प्रौढ़, स्थूल-काय, आब असहाय बुझु ।

परिस्थितिक मेह

अरु संसारक झंझटसँ दाबल दुहु भाग,

नहु नहु घुमैत छी

(७०)

सूर्य जोंक !

ओ छथि विराट्

हुनक मात्र किछु द्रव्य अंश

ऊज्जमि परिणत भए

(ज्योति-गति-वर्गक अनुपातमे !)

अनन्त शक्ति संचित,

अरु वितरित हो चतुर्दिक्ष ।

अवस्था अनुसार हमर देहिक द्रव्य ह्रास होइछ,

होइछ नहि शक्ति-प्राप्ति

सर्वत्र अपचय,

केवल मात्र अपचय;—

तथापि हम धुमंत छो

मेहक बड़द जेकाँ !

२०

३०

(७१)

हत्या

उगिललक अछि आगि—अस्त्र !

टेलिस्कोपिक राइफलसँ

शान्ति सत्य-सेवी

सदुदार धर्म-सम्बल एक

श्याम महामानवक

कएलक अछि हत्या... !

कएलक अछि हत्या

केओ सभ्य-कुल सम्भूत

स्फीत परिधान,

अस्त्र शस्त्र शास्त्र-ज्ञाता श्वेत,

वर्ण अभिजात्य दम्भपूर्ण नर दानव ॥

१०

उगिललक अछि आगि

दुष्ट 'डेभिल', सर्प फूत्कार

कएलक अछि, अल्पबुद्धि

शत सहस्र मानवकेँ कएलक अछि विषाक्त

रक्त-तृष्णाकुल;

दह्यमान गृह, सोच

अट्टालिका लुंठित, बाल, वनिता, वृद्ध आहत,
व्यभिचार, बलात्कार कत राक्षसी अत्याचार,
युग युगसँ साधित जनु सम्यक्ताक सत्यानाश !
अट्टहास करइछ ई 'डेमिल' 'शैतान' !

२०

आइ ईश-पुत्र,
कृष्ण-विद्ध ईशाक आत्मा
संकुचित, करुणासँ विगलित अति क्षुब्ध अछि ।
हुनक अपन रक्तसँ प्रकाशित कलुष-मुक्त
जन-जाति केहन भेल ।

अभिशाप्त मानव की
चिर मलिन-हृदय रहत,

पाप-पंक-कूलप्त रहत,

शान्ति सुख-हीन रहत ?

लिङ्कन, गान्धी अरु केनैडी, मार्टिनक,

होइत रहत हत्या ?

होइत रहत रक्तपात,

होइत रहत उत्पात ?

प्रलयकर युद्धक विभीषिका—

परमाणु-विस्फोट-उत्ताप-प्रबल ज्वाल

क्षार करत क्षमाअथि धरित्रीक शान्त रूप ।

३०

चेत रे मानव !

श्वेत चर्मपर गवं नहि,

शुद्ध कर हृदय मन निर्ममल पवित्र कर ।

४०

देख मार्टिन लूथर किंग—

निर्भीक शान्तिपथ लीन

केहन सूतल अछि,

शान्त भए पड़ल अछि ओ

श्यामल घरा कोरमे—

दू हजार वर्ष पूर्व—

पड़ल छल जेना ईश-दूत

देख—

श्रद्धावनत,

कत शत सहस्र

नत-मस्तक

श्वेत अश्वेत—

शान्ति-पाठ करइत अछि,

शोक सन्तप्त अति

लज्जित कलंकित अछि

एकमात्र दुखुं दि-आततायिक कृतिसँ ।

५०

(७४)

देख हत्याराके—

पाप-लिप्त मुहके नुकओने पड़ाएल अछि,
सभ्यतासँ दूर कतहु प्रान्तर वा अरण्यमे—।

कतए गेल— ? कहाँ गेल— ?

जाओ, ओ कतहु रहत—

अन्तस्तल-दग्ध रहत

खिन्न मन, चित्त अशान्त

जीवन भरि क्लान्त रहत,

मरणोपरि नरकान्नि ज्वालामे तड़पत !

सचेत हो मानब ।

तो क्षुद्र शैतानक कनफुसकी मे पड़ नहि,

अपना के चीन्ह—

तो अमृतक संतान धिके—

निष्कलुष शाश्वत आनन्द-रूप आत्मा तो,

अपनाके देख, तो सभमे देख आत्माके ।

त्याग-मय जीवन,

शुभ कर्म हेतु बलिदान—

अपन रक्तसँ जघन्य पाप पुञ्ज घोएलन्हि अछि,

ईशा, गान्धी, अरु मार्टिन लूथर किंग ।

६०

७०

(७५)

देह-पात भेल किन्तु अमर हिनक वाणी अछि

शान्ति सन्देश दैत,

अमर हिनक आत्मा अछि

संतत सचेष्ट

जे पृथ्वी पर प्राणिमात्र

प्रेम-भाव भरल रहओ,

सभ केओ चिर सुखी रहओ ।

चल तो अनुरूप हुनक—

स्वप्न कर साकार !!

८०

अभिनन्दन

शत सहस्र अभिनन्दन !

अद्भुत, अकल्पनीय, अविस्मरणीय घटना--

चन्द्रमाक तल पर भेल मानव शुभ पद अर्पण !

धन्य विज्ञान ज्ञान,

धन्य साधन महान,

स्वतन्त्र वातावरण

अनवरुद्ध मानव मन

चिन्तन मग्न कार्य लग्न

धन्य धन्य लक्ष-जन-निष्ठा-श्रम-तप-विधान ।

क्षद्र नर तन परन्तु

साहस अपरिमेय,

अदम्य उत्साह

अह मनोबल दुर्जेय;

महावीर, मृत्युंजय

धरणि पुत्र कॉलिन्स

आर्मस्ट्रॉङ्ग, ऑल्ट्रिन—

मानव समाजक आत्मशक्तिक परिचायक

शान्ति सन्देश वाहक

१०

आइ चन्द्रमाक तल पर

राखल चरण आओर फहराओल विजय केतु

आगाँ ग्रह नक्षत्र-मंडल संचरण हेतु !!

२०

गर्वोनत धरित्री आइ,

कोटि-कोटि जन गण मन

मंगल कामना करैत

देछ शुभ अभिनन्दन

शत-सहस्र अभिनन्दन !!

(७८)

आउ दुर्गे

आउ दुर्गे दुरित नाशिनि
सिंह-वाहिनि भगवती मा !

आउ दुर्गे दुरित नाशिनि..... ।

शुभ्र विद्युत् कान्ति तनु,
वशि भाल, सुस्मित मुख, त्रिनेत्र,
त्रिशूल चक्र गदाकुशादिक
पाश कर, करबाल, चाप
प्रशस्त कत विधि अस्त्र सज्जित,
मत्त रण-चण्डी बनलि, रिपु-
शैन्य घालिनि, भगवती मा

आउ दुर्गे दुरित नाशिनि ।

सकल लोकातंक कारक,
मनुज-सुर-गण-शान्ति-हारक
विविध छल बल परम
गर्वोद्धत अजेय स्वरूप-धारक,
प्रबल महिषासुरक वक्षस्थल विदारिणि भगवती मा-
आउ दुर्गे दुरित नाशिनि ।

१०

(७९)

धूम्रलोचन, चण्डमुण्ड,
प्रचंड सेनाधिप-त्रिदश-रिपु,
रक्तबीज विचित्र

२०

मित्र समर्थ शुभ निशुभ

दैत्यक दर्प-नाशिनि,

अन्त-कारिणि, लोक-तारिणि, भगवती मा—

आउ दुर्गे दुरित नाशिनि ।

वाम वीणा पाणि,
दक्षिण कमल धारिणि इन्दिरा,
अरु आबु-वाहन गजानन सह
षडानन, कत देव देवी-

योगिजन योगिनि सुसेवित,

विधि सुरेन्द्र उपेन्द्र वन्दित,

३०

भक्तजन मानस विहारिणि,

मुक्ति दायिनि भगवती माँ ।

आउ दुर्गे दुरित नाशिनि,

सिंह वाहिनि भगवती माँ !!

अन्तरिक्ष-यात्री

उड़ि रहल छी व्योममे हम तीव्र वेगे-
प्रति मिनटमे
तीनि सएसँ अधिक मीलक गति हमर अछि;
मात्र नव्वे मिनटमे—
किछु दीर्घ वृत्ताकार पथ घए
करी पृथिविक प्रदक्षिण हम !

पुराणक अनुसार
गरुड़ अरु हनुमान,
जाम्बवान महान के
छलन्हि क्षमता—
अनेको बेरि अवन्तिक प्रदक्षिण करवाक....
किन्तु ओ सभ मनुज नहि ।
हम सदेह मनुष्य छो;
दूर, पृथिवीसँ बहुत छी दूर.... ।
केहन सुन्दर, केहन ई अपरूप उदयक काल,
अरुण वर्ण-च्छटा रश्मिक जाल,
सूर्य, पूर्ण शशांक दुहु दिशि
मातृ-अंचल-लग्न जनु दुइ बाल !

१०

नील सागर मेखला
अरु महा-सागर मध्य
फेन बुदबुद रूप द्वीप समूह,
धवल ध्रुव दुहु,
शुभ्र सानु हिमाद्रि,
हरित घूसर अफ्रिका, आस्ट्रेलिया भूभाग
एतएसँ सम किछु सोहाओन लाग !
एतएसँ हम, ग्राम, देश, प्रदेश
मात्रके नहि बुझिअ निज :

हो भान

विविध वर्ण विचित्र शुभ्र परिधान
पहिरने सम्पूर्ण वरिणी देवि
थिकी' अपने जननि !

१०

भेदक ज्ञान

अछि न, केओ किछु बुझि पड़ै' अछि आन—
एतए छी हम सून्य' नभमे
शत सहस्रो यंत्र-संयत कक्षमे
ई देह अछि भसिआइत—
धरा-गुरु-आकर्षणक नहि लेश,
भार हीन-शरीर वस्तु विशेष;

मन तथापि अनेक दिशि बडआइत—
मात्र यन्त्रक वले ई स्थिति प्राप्त ।

४०

एहन मानव छथि धरा पर—
मन अचंचल, बुद्धि स्थिर, चित शान्त,
साधना-संयत-मनोबल युक्त
मोह आकर्षण-परिधिसँ मुक्त,
निरासक्त, समस्त जग संसार
होइन्हि हुनकर अपन जन परिवार ।
किअएने ओहने बनी,

वैविध्यमे एकत्व

भाव राखी, छोड़िदी संकुचित क्षुद्र ममत्व ।

५०

सभक यदि हो एहन व्यापक दृष्टि,
केहन पृथिवी परक होएत सृष्टि !!

‘बाह रे संसार,
देखले संसार’ !

आगि लागल अछि
जरै’ अछि ग्राम नगर प्रदेश,
जरए सोनाक बडला देश ।
जरै’ अछि सात—साढ़े सात कोटि
मनुष्य केरि ओ जन्म गत अधिकार
स्वतन्त्राक;
विनाश नर-संहार,
बन्दूक, तोप, मशीन गन केरि बात नहि,
आकाशसँ हो वमक वर्षा, अग्नि वर्षा,
होअए वज्र प्रहार,
क्रूर दमनक चक्र,—

१०

बालक वक्ष पर हो कठिन बूट प्रहार,
वृद्ध सभकेँ ‘वायनेट’क तीक्ष्ण धारे’ विद्ध कए
हो अट्टहास,
विलास —
शत-शत बालिकाकेँ बाप-माएक समक्ष

नग्न कए की घृणित अत्याचार—की व्यभिचार,
राक्षसी, पशु बलात्कारे... मृत सहस्रो युवति शवसें
भरल खाधि, इनार !

आओर ई सभ सभ्य जगमें—
एहि बीसम शताब्दी मे !

घन विभव अरु शक्तिसँ सम्पन्न,

राष्ट्र सभहिक प्रेरणासँ,

पाबि सभ साहाय्य

ताल ठोकए, करए गर्जन—करब अत्याचार,

ई हमर अधिकार,

की करत संसार ?

बाह रे संसार !

बाह रे संसार !!

एहन उत्पीड़न, एहन आतंक

लक्ष-लक्ष विपन्न नर नारी

अपन गृह छोड़ि,

क्षुधातुर, तन नग्न, लक्ष्य-विहीन

चलए घुरि देखए न निज गृह ग्राम,

चलए सीमा पार अछि एक देश—

२०

३०

जतए पाएब वरण, पाएब प्राण,

बैचत कहुना प्राण !

देश देशक लोक देखल स्तब्ध

ई व्यवहार,

अश्रुत पूर्वं नृशंस अत्याचार;

४०

छपल फोटो, रडल विश्वक अनेको अखबार,

देखि कए चल चित्रमे ई दृश्य

कारणिक दृगसँ बहल जलधार,

पत्र लीखल, देल भाषण, पास भेल प्रस्ताव,

पठा' किछु किछु द्रव्य, औषधि,, देखाओल सद्भाव!

किन्तु नहि केओ देल किछु साहाय्य

वीर बडला मुक्ति वाहिनि युवक जन के

जे वरण कए मृत्यु मुक्तिक हेतु

करै, छल संग्राम;

न केओ ओहि नष्ट-गृह, आवास, धर्म, समाज,

५०

नष्ट-देहक लाज, नर - नारीक,

कोटि नर-नारीक आंखिक तोर

आबि कए पोछल;

न केओ दर्पन्धि

‘खान’ दानवकेँ दपेटल;

मात्र नारी एक

शान्ति, करुणा, वीरताक प्रतीक,

देल एक ललकार,

कएल गज्जन, कएल ओ हुंकार,

‘बन्द कर ई कूर अत्याचार,’ ६०

बन्द कर ई मनुजताक कलंक,

धर्म जातिक नाम पर तो बन्द कर ई घृणा-भाव-प्रसार

शान्त कर विस्फोट ज्वाला,

अन्यथा तोँ स्वयं होएबे नष्ट;

करत भारत धर्म - रक्षा

सहत अपने कष्ट;

करत शरणागतक सभ विधि त्राण,

मुक्त-वाहिनिकेँ करत साहाय्य अरु सम्मान !

देल ई संदेश, कएल सचेत,

देश देशक राष्ट्र नायक संग कएल विचार, ७०

होअओ कहुना शान्ति स्थापित,

होअओ कहुना बन्द नर संहार !

के बुझए ई शान्ति वार्ता,

के मुनए आक्रोश ?

कूटनीतिक सड़ल दलदलमे फँसल मदहोस

राष्ट्रनायक, क्षुद्र सीमित स्वार्थ साधन जन्य,

मुख-मधुर विष-कुम्भ, पाप जघन्य

करथि, बाजथि शान्ति,

पठबथि शस्त्र-सज्जित युद्ध-पोत, विमान,

दमन चक्रक हेतु, ८०

बाजथि -- ‘शान्ति चाहिअ, एकओ ई जन क्रान्ति,

होएत बात विचार-

शान्त भए हम करब बात विचार’,

बाहरे संसार, बाहरे संसार !!

तखन ठानल युद्ध पाकिस्तान—

अन्य राष्ट्रक बले, भ्रष्ट विवेक,

धर्म, नीति विरुद्ध ई संग्राम—

बुझल छल परिणाम,

सत्य धर्मक विजय निश्चय ।

मात्र चौदह दिवसमे दुर्दान्त ९०

‘खान’क होश भए गेल शान्त,

रहल वश इतिहासमे अंकित एकर दुर्नाम ।

(८८)

भेल मुक्त, स्वतन्त्र बडला देश
स्वस्थ चित्त स्वतन्त्र भए ओ कोटि नर समुदाय
भेल निज गृह ग्राम, अपन प्रदेश,
अपन सोनाक बडला देश ।
सभक मुह पर विजय-हर्षोन्मेष,
जयति भारत, जयति बडला देश,
जयति भारत जयति बडला देश ।

भारतक शुभ मधुर ई व्यवहार—
देखले संसार !
देख ले संसार !!

१००

(८९)

विद्यापति

विद्यापति !

सुर भारतीय साधक महान,
अहें ब्रूझि मातृभाषाक मान
उद्घोष कएल—‘देसिल बअना सभजन-मिट्ठा’
रचल जन-भाषामे कविता वितान,
साहित्य गगनमे उदित भेल जनु नवल चान ।
शुभ कीर्ति-लता पसरल भूपर,
मुखरित सभ थल कल यशोगान !!

कवि विद्यापति, कवि कण्ठहार !

प्रेमावतार राधाकृष्णक

१०

लीला प्रसंग आधार पाबि,

दुइ प्रेमी हृदयक सम्बेदन

शुभ मिलन, विरह, अभिसार

भाव लए अगनित कोमल गीत गाबि,

शृङ्गारक रससँ संसेचल देशक अंचल;

मैथिली-काव्य-कानन मुकुलित, आएल वसन्त,

कवि-को किल-काकलि-मृदु-गुंजित छल दिग्दिगन्त ॥

कविपति विद्यापति, भक्त प्रवर,
 अहँ असुर भयाउनि वरद भैरविक सुत सेवक,
 खल-दल-दालिनि दुर्गाक भक्ति-ऊर्मिल भावुक, २०
 हरिहरक संग तादात्म्य राखि
 सुरमौलि ईश पद चंचरीक,
 रचि, गाबि नचारी, नाचि नाचि
 भोलानाथक अहँ मोहल मन,
 बनला शंकर 'उगना' किकर ।
 त्रिभुवन-तारिणि-तट बालुक कण
 सुखसार अहँक हित छल संतत;
 निश्छल मन, थढ़ा भक्ति-बद्ध
 अइली' जननी गंगा अपनहि,
 कलकल छलछल नवधार बहल, ३०
 शुभ कातिक धवल त्रयोदशि तिथि,
 त्यागल शरीर नश्वर; भूपर
 गाथा अहाँक भए गेल अमर,
 वाणी अहाँक रहि गेल मुखर
 कविपति विद्यापति, भक्त प्रवर !!

सान्ध्य-प्रभात-तारा

घूलि घूसरित म्लान
 पश्चिम आकाशमे—
 एकमात्र नक्षत्र
 आँचर तरक दीप जेकां
 क्षीण किछु प्रकाश देख,
 हमरा हृदयमे होइछ सोत्सुक उल्लास ।
 प्राची दिशामे ओएह
 जागृति-ज्योति-दूत बनि
 दीपित प्रभात तारा
 हमरा करए हाथ ! शंकित, हताश !! १०

जेठक दुपहरिआमे

जेठक दुपहरिआमे—

छाहरिमे एक सए पन्द्रह अंश तापमान,
 घह घह घह जरैछ
 आकाश म्रियमाण,
 तप्त अछि घरातल अरु लहकैत पवमान,
 धू धू धू दौड़ि रहल विद्युत-गति रेलयान ।
 ब्वायलरक भट्ठी केँ खोलि कए देखै' अछि
 चालक, खलासी पुनि पाबि कए इसारा बस—
 झो'कैत' छि कोइला-आ' धवकैत' छि आगि,
 प्रेसर बढ़ाबक छैक
 बढ़ाबक छैक तापमान ।

१०

आगाँ रेल पथ पर दृष्टि,
 चिलमिलाइत लू'क लहरि,
 जलाशय सन भातमान
 मृग-तृष्णा गतिमान—
 बढ़ि रहल आगाँ दिशि,
 बढ़ि रहल रेल यान।

ग्रीष्म-ताप-निलिप्त निर्जीव रेल,—किन्तु
 जीवन्त चालक गण

सहज भाव कार्यरत, सहज भाव सावधान,
 जेठक दुपहरिआमे ।

२०

जेठक दुपहरिआमे—

धड़िआ पहिरने बस
 छौंड़ा किछु चभचवामे
 बोहियाइत पगुकेँ
 धोइत'छि रगड़ैत'छि,
 डाँड़ भरि गर्म्म सड़ल गन्धकैत पानिमे;
 महिसे सन सुकोमल
 चमड़ा आ' रङ्ग एकर,
 बुद्धि ज्ञान कमशः
 ओहने भइए जेतैक
 गुवानै' छन्हि सूर्यक प्रखरतर तापकेँ कि
 लह लह पुरिबा वा पछबाक क्षरकी केँ ?
 कहुखन किलकारी दैत
 कहुखन पिहकारी दैत,
 चुभकैत'छि मस्त भेल

३०

जेठक दुपहरिआमे ।

जेठक दुपहरिआमे

खेसाड़ी क बसिया रोटीक एक टुकड़ी खाए,

पहर पहर घरि खेत आरि घूर बउआइत,

घास छिलेत अपस्यांत,

तप्पत तन, तबधल मन,

छिट्टा माथ पर उठाए

छौंड़ी एक अबइत अछि,

ठाढ़ि भेलि विलमडत'छि,

छाड़ैत'छि निश्वास

देखैत'छि लोलुप दृष्टि

दश बीस पाकल काँच,

जामुन खसल कारी लाल — ।

राखिकए छिट्टा अपन,

झाड़ैत'छि घूसर केश,

देखैत'छि दहिना हाथ, दुखाइत ठेला सभ,

घामक टघार गाल छाती बाँहि पर छलैक

अपनहि सुखाए गेल—

अनुपतन यौवन,

बस डाँड़मे लपेटल छैक

४०

५०

फाटल पुरान मैल साड़ीक टुकड़ा छोट—

बीछैए खाइए मटिआएल जामुन,

ताकि केओ गरजे छथि—

के थिके ? के थिके ? गाछो सँ भाग,

तो बीछै छै आम ?

भिनसरसँ एखन घरि आइ जालिओ भरल अछि तहि,

गाछोस भाग ने त

सहमि कए ठाढ़ि होइछ,

लए लैछ दुइ गोट,

दबा लैछ गाल तर,

पाछाँ मुड़ि जाइत अछि,

उठबैत'छि घास अपन,

पकड़ैत'छि बाट अपन,

दहकैत रोद अरु लहकैत पुरिबामे

जेठक दुपहरिआमे ।

जेठक दुपहरिआमे—

सतमहला कोठा केरि

तेसर महल घर शान्त

वातानुकूलित कक्ष, सुसज्जित परिवेश ।

६०

७०

(६६)

द्वे दश बजेसँ आइ
साहेब अतिव्यस्त छला
दू दू टा मीटिङ छलन्हि
एखने त 'लाइट लंच'—लघु भोजन लेलन्हि अछि ।
काँफी सङ घूम-पान
समकिल्लु समापन कए
सोफा पर 'सिस्ता' मे—
साहेब सुस्ताइत छथि
जेठक दुपहरिआ मे ।

(६७)

कौआ

गोआ,

थोड़मे परिचय हमर ?
—एक वर्णकारी रंग
कंठ किछु धूसर,
तेज मेही चोँच, चाङुर
आओर काँओ-काँओ कर्कश स्वर ।
सुद्धाचुद्ध निरामिष वा आमिष कोनो वस्तु—
सभ किछु अछि भक्ष्य,
सभ किछु अछि आहार,
अनादर अरु दूर-दूर दूर
सभ थल तिरस्कार ।

१०

चकुआइत बैसै' छी
कूदै' छी, फुदकै' छी
दूर ल'ग उड़ैत छी
भरि दिन बउआइत छी,
कहुना कए जिवैत हम
जिवैत छी वेशी दिन—
किन्तु कहुना कए जिवैत छी ।

(६८)

छल कपट जानी नहि,
स्पष्ट हमर व्यवहार ।
जरए जखन जखन ब पेट—
कीड़ा मकोड़ा वा सड़ल गड़ल ऐंठोकोठ
किछुओ छिड़िआएल नहि—
भेटए जखन बाड़ी वा आङनमे,
तखने झपट्टा मारि
लोल भरि लैत छी:....
तखन नहि बूझी जे
ककरा आगाँक हम
छीनल अछि ग्रास,
वृद्ध वा बालकके

२०

३०

कएलहुँ अछि हताश !
इएह त जीवन अछि;
कुकरोसँ दीन हम ?
आश्चर्य !
भयंकर नख-दन्त
सभ रूपेँ अशुचिकर ओ—
(भेला सँ बताह त)

(६९)

तकरा त सभ्य लोक
स्नान, खान-पानसँ
शिक्षित बना लैछ,
ओकरा पर देख गृह परिवारक रक्षा-भार !
हमरा की ?
बूझल अछि ?
हम अपन गर्भस्थ अंडाकेँ जन्म दए
सेवी कत कष्ट काटि;
(माएक ममता त जानल अछि सभकेँ !)
तखन ओ राक्षसी
कोइली चोरा कए आवि
खसा कए मारि देख निरपराध बच्चा हमर,
राखि देख अंडा अपन,
निर्लिप्त विहरेत'छि
कुचरेत'छि, कुहकैत'छि
पबैत अछि प्रशंसा वेश,
सुन्दर सुर-लहरीसँ !
केओ नहि दुत्कारै' छेँ कूर ओकर कर्मकेँ,
केओ नहि बूझए हमर

४०

५०

कही कोखि-मर्मके ।

अनकर की बात कहब ?

परम पुरुष रामचन्द्र—

देखल जे बालक रूप

६०

निश्छल मन, रूप-लुब्ध चित्त हमर,

स्वयं देखि ओदन दधि,

अपन मुहक पकमान,

मुग्ध कएल केहन हुनक बाल-मुलभ मुसुकान !

सएह जखन ज्ञानवान

सुब्ब, आवेश वश

फेकल तृण-ब्रह्म-शर

घृष्ट, दुष्ट, लम्पट पलायित जयन्तक प्रति,—

नहि नहि, क्षुद्र काक प्रति !

इन्द्रक सुपुत्रके न लागल कलेप,

७०

किन्तु कलपैत काक

वंशगत दंडित भेल,

सर्वदाक हेतु ओ एक आँखि वंचित भेल !

मात्र मां श्यामा ओ धूमावती

राखि दृष्टि,

सस्नेह करुणा-भाव,

होइ छथि प्रसन्न ओ काक-बलि देलासँ

धूमावती त अपन रथ पर बैसओने छथि !

सुसंगति पओलासँ, बूझब हमर व्यवहार ?

८०

भुसुण्डीक आचार,

शुचिता, ज्ञान, सुविचार,

श्रद्धा, भक्ति, अन्वित अछि,

भुर मुनि नर चन्चित अछि ।

हम की नहि चाहे' छी

सभक हम प्रिय बनी,

यथार्थमे नीक बनी

नीकक प्रतीक बनी ?

दए सकब हमरा अहाँ प्रोत्साहन स्नेहिल यत्न, ?

आनब त ने मनमे किछु वर्ण, जन्म-जाति प्रश्न ?

मृदु मयंक हंस शिशु

आदित्यपुरक उपनगरी—

छोट छीन उद्यान

बडलाक आगाँमें, मखमली हरियर दूभि,

एकाकी बैसल हम;

कार्तिकी पूर्णिमा

शान्त श्याम आकाश,

प्राची दिशि पूर्ण चन्द्र

ऊपर उठैत क्रमहि

शुभ्रतर द्योतित कर

विकरित करैत—

देखल हम मृदु-मयंक ।

नारिकेल-हरिताभ-

पत्र-जाल आवद्ध

पिञ्जरस्व हंस शिशु !

आदि कविक कल्पना—

[लङ्काक उद्यान,

सीता-अन्वेषण-रत राम-दूत हनुमान

देखैत पूर्ण चन्द्र नील-नभ-भासमान]

विभोर भेल जाइत छलहुँ,

१०

अकस्मात् बलास्ट-फर्नेसक उत्तप्त धूम

लोहित धूसरित गैस

कूर राक्षसक भयंकर उच्छ्वास जेकाँ

झौंसि देलक आकाश,

क्षार कए देलक हमर मानस-मरालकेँ ।

ई की व्याघात !

काम-क्रीडारत क्रीञ्चक

कूर-बाण-विद्ध देखि

अभिशाप स्फुटित भेल—

‘प्रतिष्ठा नहि पएबै तो’

नीच व्याध चिर काल ।’

बहराएल मुखसँ—आह !

हन्त आइ महायंत्र

मानवकेँ शान्तिसँ रहए नहि देत,

ई प्रतिष्ठित नहि करए देत

भूतलपर कोमल भाव !

२०

३०

(१०४)

ओ गाछ

केहन छल ओ गाछ ।

बड़का ओहि पाँतरमे
बाटहिक कातमे,
केहन छल सपल्लव,
झमटगर केहन डारिपात ।

अदम्य एकर अन्तः-शक्ति
दृढ़ता उर्ध्वगामी दृष्टि,
स्वबल-संरक्षित ई
विकटतम परिस्थितमे
एकाकी बड़ल गेल, पसरल गेल, ऊँच भेल— १०
बृहत् एहि पाँतर मे ।

असंख्य चिड़ै चुनमुनीक
रहै छलै' आवास,
थाकल ठेहिआएल पथिक
पवै छल अनायास
स्नेह भरल शीतल छाह ।

(१०५)

साधु वा असाधु,
दुष्ट वा शिष्ट होअओ,
सभक हेतु वरद हस्त,
सभक हेतु मुक्त हस्त,
ढेप वा झटहा चलओलो पर दैत छलै'
मधुर सुस्वादु फल !
सएह त थिकैक, नीक गाछक असल धर्म ।

२०

इहो छल नीक,
इहो छल विशाल,
इहो छल महान ।
आ' ताही पर अचानक खसलैक ठनका !
भयंकर बज्रपात !
ई की भेल ?
ई कोना कएल गेल ?
शून्य भेल पाँतर आ' स्तब्ध भेल देव कोश ।

३०

(१०६)

विधिक ई विधान ?

नियतिक ई निर्णय ?

ककरा की कहवै,

ककरा की कहल जाए !

०५

ककरा की कहवै, ककरा की कहल जाए !
ककरा की कहवै, ककरा की कहल जाए !
ककरा की कहवै, ककरा की कहल जाए !

ककरा की कहवै, ककरा की कहल जाए !
ककरा की कहवै, ककरा की कहल जाए !
ककरा की कहवै, ककरा की कहल जाए !

ककरा की कहवै, ककरा की कहल जाए !
ककरा की कहवै, ककरा की कहल जाए !
ककरा की कहवै, ककरा की कहल जाए !

०५

परिशिष्ट

कविता सभहिक रचना-काल, स्थान तथा किछु टिप्पणी।

१. सूर्य—मेष संक्रान्ति, अप्रिल १९३६ ई०; पटना ।
२. निर्झर-नीर—जुलाई १९३६ ई०; पटना ।
भारत-भारत-कलान्ति (पं० ६) महाभारतमे अज्जु नके
जे कलान्ति भेल छलन्हि ।
३. वनफूल—सेप्टेम्बर '४२ ई०; पटना ।
४. विशिर मेघ—फरवरी '४४ ई०; सिरका, रामगढ़ ।
किन्तु.....असहाय (पं० ५-६) धान काटि लेलाक बाद
पृथिवीक रूप ।
५. विद्यापतिक मृत्यु—कार्तिक शुक्ल त्रयोदशी '३६ ई०
पटना । ओही संध्याकाल पर्व-समारोहमे पठित ।
६. हरिद्वार (१), (२)—जून १९४० ई०; खरड़ख (मधुबनी);
७. वसन्त—अप्रिल १९४१ ई०, पटना ।
८. जय भारत—१५ अगस्त १९४७ ई०; सिन्ध्री ।
९. बारदा विजय—अक्टूबर १९४८; सिन्ध्री ।
१०. मानभूमि—फरवरी १९५०; सिन्ध्री ।
११. कार्तिक धवल तिथि त्रयोदशि—अक्टूबर १९५२; गया ।

१२. जरत्कार उपाख्यान—मार्च १९५४; गया ।
महाभारत आदि पर्वसं मूलक अधिकांश अनुवाद । निम्न
तोड़वाक कारणों ऋषिक क्रोध, सती जरत्कारक प्रार्थना
तथा जरत्कार ऋषिक उत्तर, आश्वासन किछु नूतन
रूप कल्पित ।
१३. सौन्दर्य-धीष—दिसम्बर १९६६ ई०; रांची
१४. प्रतीक—मार्च १९६७ ई०; रांची ।
संयत्र—बड़का कारखानाक 'चिमनी' पर रचित ।
(पं० ११-१५) बज्रलेप-सिमेंट, सिकताकण-बालु, उपलवृण-
पाथरक गिट्टी - 'स्टोन चिप्स'—कंक्रीट बनएवाक उपकरण
ओ प्रक्रिया ।
झंझा—वर्षाक संग तेज बसात; आसार-मुसलाधार वृष्टि ।
१५. रिक्त : सर्वों भवति हि लघु :-अक्टूबर १९६७ ई०,
रांची । कालिदासक मेघदूतक एक पद्यांश । अन्न,
वारिवाह, स्तनयितु—मेघक नाम ।
जनगणमन पर्वलीन (पं-७५) शरद समय मे बहुतो
पर्व होइछ ।
१६. लागल अछि कुहेस—दिसम्बर १९६७ ई०, रांची ।
'कज्जलक पहाड़ कलिन्द तनया सद्ग' (पं ४७-४९)
वर्ण - रत्नाकरमे अन्धकार वर्णनक अनुच्छाया ।
१७. मेहक बड़ जेका—तिला संक्रान्ति; १९६६ रांची;
ज्योति-गतिवर्गक (पं. २४) — ऊज्ज्व (E)=द्रव्य ×
ज्योतिगतिवर्ग (MC²) —आइंस्टाइनक सिद्धान्त ।

१८. हत्या—१७-४-६६, रांची । माटिन ल्यूथर किंगक हत्या पर
'क्रिश्चियन सभहिक अनुसार ईश्वरसे विद्रोह
कर' वाला 'डेभिल', 'शैतान' सृष्टि मे अशान्ति
एवं पापात्माक प्रवृत्ति के भड़कबैछ, एहि मे ओकरा
आनन्द भेटैत छैक । 'शैतान'—सापक रूप धए पहिल
मानवके कनफुसकीस प्रलोभन देने छलन्हि ।
ईशा—ईश्वरक पुत्र कहल जाइत छथि । क्रुश-विद्ध-
हुनका काँटी ठोकि कए मारि देने छलन्हि; ओ
अपन रक्तसं मानव समूहक पापके धोएने
छलाह । (पं ८४)—'किंग'क एक प्रमुख भाषणमे
बेरि बेरि कहल गेल—'I have a dream'
१९. अभिनन्दन—२१-७-६९ ई०, पटना ।
२०. आउ दुर्गे-नृत्य-गीत; महाष्टमीक राति, १९६९ ई०, पटना ।
२१. अन्तरिक्ष-यात्री—मार्च १९७०, ई० पटना ।
२२. बाहरे संसार, देखले संसार—दिसम्बर १९७१ ई०, पटना ।
२३. विद्यापति—कातिक १९७२, पटना ।
२४. सान्ध्य-प्रभात-तारा :-मार्च १९७३, पटना ।
ओएह शुक्र ग्रह सन्ध्या आ प्रातः दूनू काल उगैत छथि ।
कविता-नायिकाक उक्ति ।
२५. जेठक दुपहरिआमे—जून १९७४, पटना ।
२६. कौआ—सेप्टेम्बर १९७४, पटना ।
(पं. ७२-७३) भवान् तस्याक्षि काकस्य हिनस्तिस्म स दक्षिणम्
तदा प्रभृति काकानामेकमक्षि विधीयते । वा. रा

